"અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્" ગ્રંથ જીર્ણોધ્ધાર ૧૨૮

જૈન ચિત્ર કલ્પલતા

: દ્રવ્ય સહાયક :

પૂજ્ય સાધ્વીજી શ્રી ભદ્રગુણાશ્રીજી મ.સા. તથા
સાધ્વીજી શ્રી કલ્પેશપજ્ઞાશ્રીજી મ.સા. ની નિશ્રામાં
સં. ૨૦૬૭ ના ચાતુર્માસમાં
શ્રી માણિભદ્ર સોસાયટી, સાબરમતીના
આરાધક શ્રાવિકાઓની જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-380005
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૬૮ ઈ.સ. ૨૦૧૨

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૫ (ઈ. ૨૦૦૯) – સેટ નં-૧

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजी म.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणि चूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणि म.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामी म.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणि म.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजी म.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलाल सोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारती गोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલ સોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बर कोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈન જ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામ મહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी. ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजी म.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	454

026	तत्त्वोपप्लवसिंहः	श्री जयराशी भट्ट, बी. भट्टाचार्य	188
027	शक्तिवादादर्शः	श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री	214
028	क्षीरार्णव	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	414
029	वेधवास्तु प्रभाकर	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	192
030	शिल्परत्नाकर	श्री नर्मदाशंकर शास्त्री	824
031	प्रासाद मंडन	पं. भगवानदास जैन	288
032	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-१	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	520
033	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-२	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	578
034	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-३ (१)	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	278
035	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-3 (२) (३)	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	252
036	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-५	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	324
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦) – સેટ નં-૨

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્ત્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६	सं	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	296
056	विविध तीर्थ कल्प	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	विवेक विलास	सं/ગુ.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	पञ्चशती प्रबोध प्रबंध	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	सन्मतितत्त्वसोपानम्	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	मोहराजापराजयम्	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	क्रियाकोश	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	कालिकाचार्यकथासंग्रह	सं/ગુ.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	जन्मसमुद्रजातक	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	मेघमहोदय वर्षप्रबोध	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376

075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	374
076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૨	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	238
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	श्री विद्या साराभाई नवाब	194
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	192
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री मनसुखलाल भुदरमल	254
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	238
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૩	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	पू. कान्तिसागरजी	114
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री	910
085	**विश्वलोचन कोश**	सं./हिं	श्री नंदलाल शर्मा	436
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	336
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	230
088	હસ્તસઞ્જીવનમ્	સં.	पू. मेघविजयजीगणि	322
089	એન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	સં.	पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी	114
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	સં.	आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी	560

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इन्स्टीट्युट बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं,	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार – न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354
109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिविजयजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपा.	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६८ (ई. 2012) सेट नं.-४

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	भाषा	प्रकाशक	पृष्ठ
127	महाप्रभाविक नवस्मरण	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	754
128	जैन चित्र कल्पलता	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	84
129	जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास भाग-२	हीरालाल हंसराज	गुज.	हीरालाल हंसराज	194
130	ओपरेशन इन सर्च ओफ सं. मेन्यु. भाग-६	पी. पीटरसन	अंग्रेजी	एशियाटीक सोसायटी	171
131	जैन गणित विचार	कुंवरजी आणंदजी	गुज.	जैन धर्म प्रसारक सभा	90
132	दैवज्ञ कामधेनु (प्राचिन ज्योतिष ग्रंथ)	शील खंड	सं.	ब्रज. बी. दास बनारस	310
133	करण प्रकाश	ब्रह्मदेव	सं./अं.	सुधाकर द्विवेदि	276
134	न्यायविशारद महो. यशोविजयजी स्वहस्तलिखित कृति संग्रह	यशोदेवसूरिजी	गुज.	यशोभारती प्रकाशन	69
135	भौगोलिक कोश-१	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	100
136	भौगोलिक कोश-२	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	136
137	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	266
138	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	244
139	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	274
140	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	168
141	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	282
142	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	182
143	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-१	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	384
144	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-२	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	376
145	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-३	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	387
146	भास्वति	शतानंद मारछता	सं./हि	एच.बी. गुप्ता एन्ड सन्स बनारस	174
147	जैन सिद्धांत कौमुदी (अर्धमागधी व्याकरण)	रत्नचंद्र स्वामी	प्रा./सं.	भैरोदान सेठीया	320
148	मंत्रराज गुणकल्प महोदधि	जयदयाल शर्मा	हिन्दी	जयदयाल शर्मा	286
149	फक्कीका रत्नमंजूषा-१, २	कनकलाल ठाकूर	सं.	हरिकृष्ण निबंध	272
150	अनुभूत सिद्ध विशायंत्र (छ कल्प संग्रह)	मेघविजयजी	सं./गुज	महावीर ग्रंथमाळा	142
151	सारावलि	कल्याण वर्धन	सं.	पांडुरंग जीवाजी	260
152	ज्योतिष सिद्धांत संग्रह	विश्वेश्वरप्रसाद द्विवेदी	सं.	ब्रीजभूषणदास बनारस	232
153	ज्ञान प्रदीपिका तथा सामुद्रिक शास्त्रम्	रामव्यास पान्डेय	सं.	जैन सिद्धांत भवन	160
	नूतन संकलन				
१	आ. चंद्रसागरसूरिजी ज्ञानभंडार – उज्जैन	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	
२	श्री गुजराती श्वे.मू. जैन संघ-हस्तप्रत भंडार – कलकत्ता	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	

જૈન
ચિત્ર કલ્પલતા
॥ સંપાદક · સારાભાઈ નવાબ ॥

જૈન ચિત્રકલ્પલતા

વિક્રમના અગિયારમાથી વીસમા શતક સુધીની
ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કલાના
લાક્ષણિક નમૂનાઓનો
ચૂંટેલો સંગ્રહ

સંપાદક અને પ્રકાશક
સં. ૧૯૯૬ · સારાભાઈ મણિલાલ નવાબ અમદાવાદ · ઈ. ૧૯૪૦

ગ્રંથસ્વામિત્વના હક્ક સંપાદકને સ્વાધીન

મુદ્રક · બચુભાઈ રાવત · કુમાર પ્રિન્ટરી · ૧૪૫૪ રાયપુર · અમદાવાદ

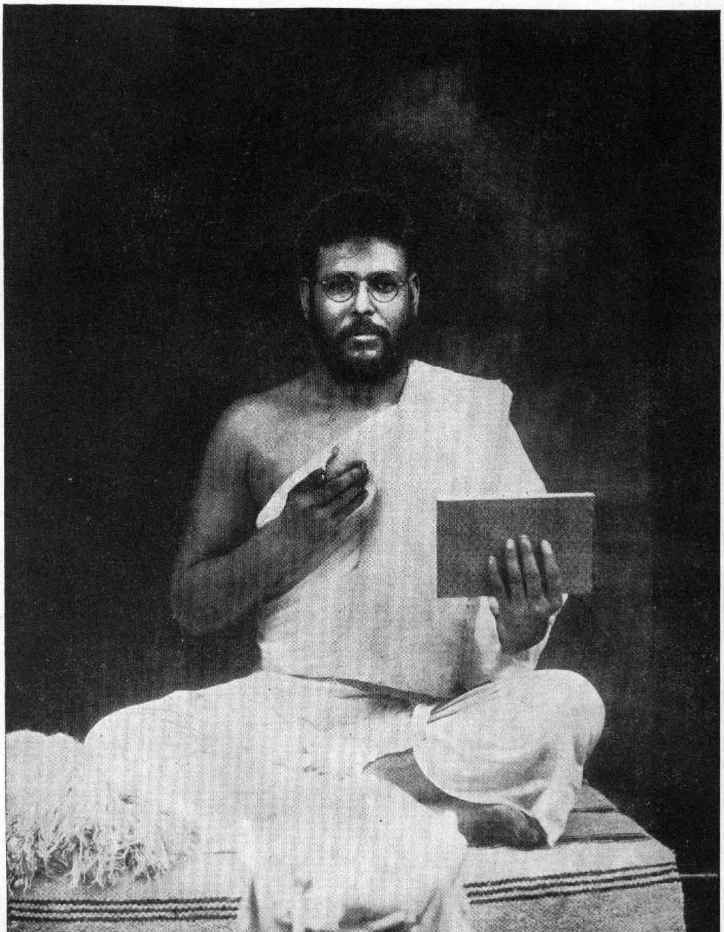

તપગચ્છાધિપતિ શ્રીવિજયનેમિસૂરીશ્વરજીના પ્રશિષ્ય

મુનિમહારાજ શ્રીવલ્લભવિજયજી

જન્મ · સંવત ૧૯૬૦ના શ્રાવણ સુદ ૫ દીક્ષા · સંવત ૧૯૮૦ના માગશર સુદ ૫

પરમપૂજ્ય ગુરુદેવ શ્રીવલ્લભવિજયજીને

નિવેદન

શ્રી જૈન પ્રાચીન સાહિત્યોદ્ધાર ગ્રન્થાવલિના અગિયારમા પુષ્પ તરીકે 'જૈન ચિત્રકલ્પલતા' નામની આ પુસ્તિકા જનતા સમક્ષ મૂકતાં મને અનહદ આનંદ થાય છે.

ઇ. સ. ૧૯૩૬માં મારા તરફથી 'જૈન ચિત્રકલ્પદ્રુમ' નામના જે બૃહદ્ ગ્રંથનું પ્રકાશન કરવામાં આવ્યું હતું તેમાં ગુજરાતની ગ્રંથસ્થ જૈનાશ્રિત કળાનો બની શકતો વિસ્તૃત અને વિપુલ પરિચય આપવાનો મેં પ્રયત્ન કર્યો હતો. એ પ્રયત્નને જાહેર જનતા તરફથી કેટલા ઉત્સાહપૂર્વક વધાવી લેવામાં આવ્યો હતો, તેની સાબિતી તો એ જ હકીકત બતાવી આપે છે કે મોંઘી કીમત હોવા છતાં પ્રસ્તુત ગ્રંથની માત્ર ગણીગાંઠી નકલો જ સિલિકમાં આજે મારી પાસે છે.

એ ગ્રંથની કીમત પચીસ રૂપિયા હોવાથી સામાન્ય વર્ગ તેનો લાભ લેવાથી મોટા ભાગે વંચિત રહ્યાની મારા મિત્રો દ્વારા મને જાણ થઇ, અને તેથી પ્રસ્તુત ગ્રંથનાં સઘળાં જ રંગીન ચિત્રો તથા થોડાં ચૂંટી કાઢેલાં એકરંગી ચિત્રો, તેમજ મુખ્ય લેખોમાંથી તારવી કાઢેલા અગત્યના ભાગનો રસથાળ બનાવી આ 'જૈન ચિત્રકલ્પલતા' નામની પુસ્તિકા જાહેરમાં મૂકવા હું પ્રેરાયો છું. ઇચ્છું છું કે મારી દરેકે દરેક સાહિત્યપ્રવૃત્તિને જેવી રીતે જનતાએ અપનાવી છે તેવી જ રીતે આ પ્રવૃત્તિને પણ અપનાવશે.

આ ગ્રંથમાં આપવામાં આવેલાં તીર્થંકરો તથા દેવદેવીઓનાં ચિત્રોનો ઉપયોગ લેબલો, પોસ્ટરો અગર સીનેમા-સ્લાઇડ માટે કરીને જૈન કોમની ધાર્મિક લાગણી નહિ દુખાવવા વાચકોને વિનતિ છે.

અષાઢ સુદ ૫ ૧૯૯૬ **સારાભાઈ મણિલાલ નવાબ**
૪, પારસીની ચાલ · સાબરમતી

લેખાનુક્રમ

Foreword	W. Norman Brown	૯
Introductory Note	Dr. Hirananda Shastri	૧૧
પ્રાચીન ચિત્રોનું કલાતત્ત્વ	રસિકલાલ છો. પરીખ	૧૨
પશ્ચિમ ભારતની મધ્યકાલીન ચિત્રકળા	રવિશંકર રાવળ	૧૪
ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા	સારાભાઇ નવાબ	૧૭
જૈન ચિત્રકલ્પલતા (ચિત્રવિવરણ)	,, ,,	૧–૫૬

સંક્ષેપોની સમજ

भ० पा० का० सं० = ભક્તામર પાદપૂર્તિ કાવ્ય સંગ્રહ.
જૈ૦ ગૂ૦ ક૦ = જૈન ગૂર્જર કવિઓ
ઉ૦ ફે૦ ધ૦ = ઉજમફેઈની ધર્મશાળા
દે૦ પા૦ ના દયાવિ૦ = દેવશાના પાડાના દયાવિમલજી.
હંસવિ૦ ૧ = હંસવિજયજીના સંગ્રહની પ્રત ૧
હંસવિ૦ ૨ = ,, ,, પ્રત ૨
હંસવિ૦ ૩ = ,, ,, પ્રત ૩
કાંતિવિ૦ ૧ = પ્રવર્તકજી શ્રીકાંતિવિજયજીના સંગ્રહની પ્રત ૧
અ૦, શ્લો૦ = અધ્યાય, શ્લોક.
સોહન૦ = સોહનવિજયજી શાસ્ત્રસંગ્રહ

આવશ્યક સુધારો

પાના ૫૪ ઉપર ચિત્ર ૩૬ને બદલે ચિત્ર ૬૩ સમજવું.

ચિત્રાનુક્રમ

ચિત્ર		પૃષ્ઠાંક
૧	દેવી સરસ્વતી	૧
૨	શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ, શિષ્ય અને પરમાર્હત્ કુમારપાળ	૨
૩	,, ,,	૨
૪	અપ્રતિચક્રા (ચક્રેશ્વરી)	૩
૫	પુરુષદત્તા (નરદત્તા)	૩
૬	બ્રહ્મશાંતિ યક્ષ	૩
૭	અંબાઇ (અંબિકા)	૩
૮	સરસ્વતી	૫
૯	'પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું ચ્યવન'	૭
૧૦	ગુરુ મહારાજ શિષ્યને પાઠ આપે છે	૭
૧૧	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનો જન્મ	૭
૧૨	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું નિર્વાણ	૭
૧૩	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું સમવસરણ	૭
૧૪	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું દીક્ષા કલ્યાણક	૧૦
૧૫	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું જન્મ કલ્યાણક	૧૦
૧૬	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનું કૈવલ્ય કલ્યાણક	૧૦
૧૭	પ્રભુ શ્રી મહાવીરનો જન્મ	૧૦
૧૮	અષ્ટમંગલ	૧૦
૧૯	શ્રી પાર્શ્વનાથનો જન્મ	૧૧
૨૦	શ્રી મહાવીરનિર્વાણ	૧૧
૨૧	કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિને શ્રી જયસિંહદેવની પ્રાર્થના	૧૩
૨૨	સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની હસ્તિ પર સ્થાપના	૧૩
૨૩	શ્રી પાર્શ્વનાથનું દેરાસર	૧૩
૨૪	શ્રી આનંદપ્રભ ઉપાધ્યાય વગેરે	૧૩
૨૫	સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની હસ્તિ ઉપર સ્થાપના	૧૭
૨૬	કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિને શ્રી જયસિંહદેવની વ્યાકરણ રચવા માટે પ્રાર્થના	૧૭
૨૭	શ્રી પાર્શ્વનાથનું ચ્યવન	૧૯
૨૮	શ્રી પાર્શ્વનાથનો પંચમુષ્ટિલોચ	૧૯
૨૯	શ્રી મહાવીર પ્રભુ	૨૧
૩૦	શ્રી પાર્શ્વનાથ કાઉસગ્ગ ધ્યાનમાં	૨૧
૩૧	શ્રી ઋષભદેવનું નિર્વાણ	૨૨
૩૨—૩૩	નૃત્યનાં જુદાં જુદાં સ્વરૂપો	૨૩
૩૪	શ્રી ઋષભદેવનો રાજ્યાભિષેક	૨૩
૩૫	બ્રાહ્મણી દેવાનંદા અને ચૌદ સ્વપ્ન	૨૪
૩૬	ચૌદ સ્વપ્ન	૨૭
૩૭	ચંડકૌશિકને પ્રતિબોધ	૨૯
૩૮—૩૯	કલ્પસૂત્રની સુંદર કિનારો	૩૨
૪૦	શ્રી મહાવીરપ્રભુને સંગમદેવનો ઉપસર્ગ	૩૩
૪૧	શ્રી નેમિનાથનો વરઘોડો	૩૫
૪૨	ભરત અને બાહુબલિ વચ્ચે દ્વંદ્વયુદ્ધ	૩૭
૪૩	હરિણૈગમેષિન્	૩૯
૪૪	ત્રિશલા અને સિદ્ધાર્થ	૩૯
૪૫	ત્રિશલાનો આનંદ	૩૯
૪૬	આમલકી ક્રીડા	૩૯
૪૭	કોશાનૃત્ય તથા આર્યસમિતસૂરિનો એક પ્રસંગ	૪૧
૪૮	કોશાનૃત્ય	૪૩
૪૯	આર્ય સ્થૂલભદ્ર અને યક્ષાદિ સાત સાધ્વી બહેનો	૪૩
૫૦	ભગવાન મહાવીરની દીક્ષા	૪૪
૫૧—૫૨	કલ્પસૂત્રનાં સુશોભનો	૪૫
૫૩—૫૪	,, ,,	૪૬
૫૫—૫૬	,, ,,	૪૭
૫૭—૫૮	બાલગોપાલસ્તુતિનાં ચિત્રપ્રસંગો	૪૮
૫૯	ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનો એક પ્રસંગ	૫૦
૬૦	દેવોનું કટક	૫૧
૬૧	શ્રીપાલરાસમાંથી એક વહાણ	૫૨
૬૨	દેવોની ઉત્પત્તિશય્યા	૫૩
૬૩	ચક્રવર્તીનાં ચૌદ રત્નો	૫૩
૬૪	નગરશેઠ શાંતિદાસ તથા તેમની સ્ત્રી કપુરબાઇ	૫૫
૬૫	કાગળની પ્રત ઉપરનું એક શોભનચિત્ર	૫૫
૬૬	કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ	૫૬

FOREWORD

JAIN painting, in Mr. Nawab's illustrations, is confined to Svetambara manuscript painting. It covers the Early Western Indian style—sometimes called 'Gujarat' or specifically 'Jain', and the later styles of the great Rajput-Mughal complex, as these were utilized by that division of the Jains.

... ...

The facts about miniature painting in India differ so much from those about architecture and sculpture that this book is a good album of the entire school of Early Western Indian miniatures from the 12th to the 16th century A. D. During the time when palm-leaf was the material for books there, only Svetambara Jains, so far as our preserved and known documents reveal, illustrated their manuscripts with paintings. After paper displaced palm-leaf, that same community still executed the bulk of the existing miniatures so long as the 'Early Western Indian' style continued, and only a handful of manuscripts illustrated in that style are known to come from non-Jain sources. It was not until the 'Rajput' painting developed that the Jains lost their pre-eminence. Yet even then they used the Rajput and Mughal styles, employing in one case a well known Mughal artist. These later developments of Jain paintings are, like the older, illustrated in Mr. Nawab's book, which indeed brings the story down almost to our own day.

... ...

The illustrations of Mr. Nawab's book have high value in presenting new material study of the history of Early Western Indian miniature painting and Svetambara iconography. During the latter part of the 14th century A. D. and the early part of the 15th century, that is to say, at the end of the 'palm-leaf' period and beginning of the 'paper', the paintings have a special delicacy and refinement unknown in the earlier examples and yet without the profuse embellishment and often degeneration of the late 15th and 16th centuries. At this time we find the best drawing of the whole school; and since the drawing is the most important feature of these miniatures, we should perhaps plainly call the examples from that time the best paintings.

Equally interesting, but for different reasons, are the paintings taken from the Devashano pado bhandar manuscript of the Kalpasutra

and Kalakacharyakatha, in which on the same page a miniature done in the Early Western Indian style will be supplemented with subsidiary side scenes of a Persian character So pronounced are the Persian characteristics of the latter that even experts might be convinced that the paintings are something direct from Persia. This manuscript is the most elaborately decorated I have seen, and the very brilliance and abundance of the ornament would alone constitute the occasion for high interest, although ever remaining second to the unwelded association of styles; that is the manuscript's prime claim upon our attention.

The many variations of marginal ornamental arabesque and flower designs which Mr. Nawab has reproduced, especially those in full colour from the Kalpasutra manuscript of the Hamsavijayaji Jnana bhandar, Baroda, graphically reveal to us the mastery which the Gujarat artists of the 15th and 16th centuries had obtained over this means of enriching their pages.

... ...

This book represents a large expenditure of both labour and money by Mr. Nawab and his supporters. If it reveals to Jains alone the extent of the treasures their community possesses in manuscript paintings and encourages them to publish more of them, the labour and money will have been well expended. Such amplification of this present work would be a worthy part of that great informal programme of publication with which modern Jains are continuing their ancient and distingnished tradition of learning.

W. Norman Brown

INTRODUCTORY NOTE

THE Jaina-chitra-kalpadruma, true to its title, gives highly interesting chitras or illustrations of ancient paintings, most of which are Jaina and the rest Vaishnavite. They range between the years 1100 and 1913 afrer Christ. The earliest painting represented in this work is from a manuscript of the Nishithachurni of the Sanghvi's pado bhandar at Patan and is dated in the year 1157 of the Vikrama era. The latest is a painting by Yati Himmatvijayji of Patan. These illustrations are of various kinds and the manuscripts from which these are taken all belong to Wastern India, or we can say Gujarat. They are either on palm-leaf or on paper The earliest is on palm-leaf.

The most interesting illustrations in this publication pertain to the copy of the Kalpasutra of the late Muni Hamsavijayji's collection in the Atmaram Jnanamandira at Baroda and of Devashah's pado in Ahmedabad. They are pre-Moghul in origin and would show that the art of painting in Gujarat had reached a very high degree of perfection before the Moghul rule in India. The Devashah's pado manuscript is quite unique in that it gives illustrations of different attitudes and poses of dances described in the Natyashastra of Bharata. Similar figures are to be seen in the Chidambaram temple where full descriptive stanzas are also given. These have been published in one of the annual Reports on South Indian Epigraphy, Madras. The Devashah's pado manuscript where these pictures are drawn on the margins gives the labels showing the name of the pose or the dance represented.

These illustrations of the Ragas and the Raginis given in it are original and not copies. Evidently, it is very desirable that the manuscript is printed in its entirety and placed before scholars interested in Indian Music and Dancing soon.

... ...

Mr. Sarabhai Nawab and the colleagues are to be congratulated for bringing out this useful work. It throws a flood-light on the history of the art of painting in Gujarat and is sure to get a good reception, and it deserves it.

Hirananda Sastri

પ્રાચીન ચિત્રોનું કલાતત્ત્વ

પ્રાચીન ચિત્રકળાનું રહસ્ય કઈ રીતે સમજાય? આ પ્રશ્નનો હવે વ્યવસ્થિત વિચાર થવાની જરૂર છે. સમગ્ર પ્રાચીન શિલ્પના પરિશીલન માટે હવે સ્પષ્ટ પદ્ધતિની શોધ થવી જોઇએ. અત્યાર સુધી તો પ્રાચીન શિલ્પનું નિરૂપણ માત્ર નમૂનાઓનાં અથવા તેમની છબિઓનાં નિરીક્ષણથી થતું આવ્યું છે. શિલ્પ માત્રને સમજવાની આ સહજ પદ્ધતિ છે. શિલ્પની ભાષા આંખ બરાબર ઉકેલતી હોય ત્યાં તો નિરીક્ષણ માત્ર પણ પર્યાપ્ત ગણાય. પણ બીજા યુગ કે દેશની શિલ્પભાષા તેના અપરિચયના કારણે ભાવકને ભાવ અર્પવા અસમર્થ થાય ત્યારે એકલું નિરીક્ષણ પર્યાપ્ત નથી. વાણીના કરતાં રેખા, રંગ ઇત્યાદિ વધારે વ્યાપક છે તેથી બીજા દેશકાળની વાણીના જેવું મૌન રંગ-રેખા ધારણ કરતાં નથી, અને તેથી અજાણી વાણીના સાહિત્ય જેટલું તેમનું નિરૂપણ અસંભવિત થતું નથી; તોપણ રંગ-રેખાની ભાષાના જ્ઞાન વિના શિલ્પીના ભાવનો બોધ કરાવવામાં તે અસમર્થ છે.

રંગ-રેખાની પણ ભાષા છે. જગતમાં દેખાતાં રૂપોમાં રંગ-રેખા હોય છે, તેના અનુકરણથી તે તે રૂપ સૂચવે; તે ઉપરાંત શિલ્પીઓના ભાવનું વાહન બનતાં અથવા બનવા તેમનામાં વિશિષ્ટ અર્થભાર આવે છે. શબ્દાર્થના સંબંધ માટે સમયપદ વપરાય છે તેનો અહીં અતિદેશ કરી કહી શકાય કે રંગ-રેખાનો પણ 'સમય' હોય છે. આ રંગ-રેખાનો સમય સમજ્યા વિના તેમનાથી સાકાર થતી કલાનો ભાવ સમજવો, આસ્વાદ લેવો કે વિવેચન કરવું એ આંધળાના ગોળીબાર જેવું છે.

. . .   .

પ્રાચીન શિલ્પીઓનો 'સમય' સમજવા તેમની કૃતિઓ જોવી જરૂરની છે; પણ તેનો ઉકેલ કરવા તે શિલ્પીઓનાં ધ્યેયો કયાં હતાં, તે કેવો આસ્વાદ આપવા ઇચ્છતા હતા, કોની પ્રશંસા ઇચ્છતા હતા, કોને ખુશ કરવા ઇચ્છતા હતા, તેમનાં સાધનો કેવાં હતાં અને તેનો તે કેવી રીતે ઉપયોગ કરતા હતા આદિ જાણવાની જરૂર છે. આવા જ્ઞાનથી સજ્જ થઈ ચિત્રોનું નિરીક્ષણ કરવામાં આવે ત્યારે જ યોગ્ય પરીક્ષણ થઇ શકે. આવા જ્ઞાનના અભાવને લઇને આ ક્ષેત્રમાં થએલું ઘણું કામ ફરી કરવાની જરૂર જણાય છે, કારણકે પૂરતી સામગ્રીના અભાવે અપાએલા ઘણા અભિપ્રાયો ભ્રામક દેખાય છે. સુભાગ્યે આ જાતની થોડીક સામગ્રી આપણને પ્રાચીન શિલ્પગ્રન્થોમાં મળેછે, પણ તેનું સંશોધન કરવાની જરૂર છે. આ કાર્યમાં પ્રાચીન પરંપરા પ્રમાણે કામ કરનારા શિલ્પીઓની મદદ મળે તો વિશેષ લાભ થાય.

આ ગ્રન્થમાં જે ચિત્ર-છબિઓ ઉદાહરણરૂપે આપેલી છે તેનું કલાની દૃષ્ટિએ નિરૂપણ કરતાં પહેલાં ઉપરનું સ્પષ્ટીકરણ આપવાનું કારણ એ છે કે નિપુણ મનાતા ચિત્રવિવેચકોને પણ આ ચિત્રકળા સમજવામાં વિઘ્નો નડ્યાં છે. તેમાં મુખ્ય વિઘ્ન આ ચિત્રકારોનાં લક્ષ્યનું અજ્ઞાન છે.

પ્રથમ દૃષ્ટિપાતે આ ચિત્રો તેમનો રંગચમત્કાર અથવા વર્ણચમત્કાર અર્પે છે. 'શો સરસ રંગ છે! શી ભભક છે! કેટલી સજાવટ છે! કેટલી શ્રીમંતાઈ છે!' ઇત્યાદિ ઉદ્‌ગારો એ ચિત્રો જોતાં જ ઊઠે છે. વેલબુટ્ટાઓનો શણગાર પણ ધ્યાન ખેંચે છે. પ્રાણીઓ પણ ઠીક લાગે છે. પરંતુ માણસોનાં — સ્ત્રી-પુરુષોનાં ચિત્રો જોતાં મનમાં છાનો છાનો એવો અભિપ્રાય ઊઠે છે કે આ ચિત્રકારોને કાંઇ આવડતું નથી! આથી આ ચિત્રકલા વિષે અભિપ્રાય ઊતરવા માંડે છે! 'ઠીક છે; સાધારણ છે!' ઇત્યાદિ મત ઉચ્ચારાય છે, કારણો શોધાય છે, ઇતિહાસ તપાસાય છે! આ તો ધનિકોએ, વાણીઆઓએ, જૈનોએ પોષેલી કલા! તેમની સ્થૂલ કલારુચિને સંતોષનારી કલા! તેમની શ્રીમંતાઇને આગળ ધરતી સોના-મોતીની કલા!

આવો અભિપ્રાય બાંધનાર તે શિલ્પકારોને અને તે કલાપોષક ધનિકોને અન્યાય કરે છે, તે ઇતિહાસને પણ કલુષિત કરે છે. પ્રથમ તો પૈસાદારોની મરજી પ્રમાણે બધું થવું જોઇએ એ આજના યુગની મહાન શોધ તે દિવસના ધનિકોએ કરી ન હતી; અને ધનિકો ઇચ્છે તે પ્રમાણે પોતાની કલાને નમાવવાની ફરજ તે યુગના શિલ્પીઓએ સ્વીકારી ન હતી! એટલે ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ શોધ કરવી હોય તો ખોળવું એ જોઇએ કે આ શિલ્પીઓનાં ધ્યેયો શાં હતાં અને તેમના ભાવકોની કઇ અપેક્ષાઓ હતી?

. . . .

ભારતીય ચિત્રકારોને માનવો ચીતરવાની આવડત ન હતી એમ તો કોઇ ખુલાસો નહિ આપે. ગુજરાતના આ ચિત્રકારોને તેની આવડત નહિ હોય તે પણ તેમાં રહેલું રેખાનું પ્રભુત્વ જોનાર માનશે નહિ. ચિત્રમાં 'સાદૃશ્ય' લાવવાની નિપુણતા તેમને સુસાધ્ય હતી. પણ આ સાદૃશ્યવાળાં ચિત્રોમાં તેમની ચિત્રકલા સમાપ્ત થતી ન હતી. ચિત્રોનો આ એક પ્રકાર હતો અને તેને ચિત્રસૂત્રકાર 'સત્ય' એવી પારિભાષિક સંજ્ઞા આપે છેઃ यत्किंचिल्लोकसादृश्यं चित्रं तत्सत्यमुच्यते ॥ જેમાં કંઇક લોકસાદૃશ્ય હોય તે ચિત્ર 'સત્ય' કહેવાય છે.

તે તે પદાર્થની પ્રતિકૃતિ સાધી જે ચિત્રો દોરવામાં આવતાં તે બધાંનો આમાં સમાવેશ થતો હશે. પણ આ ઉપરાંત ચિત્રકારો બીજી રીતે પણ ચિત્રો દોરતા. આપણે જાણીએ છીએ કે વૃક્ષ, વેલ, પત્ર, પુષ્પ આદિના ચિત્રણમાં કેટલાંક ચિત્રોમાં પ્રતિકૃતિ હોય છે તો કેટલાંકમાં કેવળ સૂચન લઇ તેમાંથી વિવિધ મનોહર આકૃતિઓ ઉપજાવીને દોરવામાં આવે છે. કોતરકામમાં પણ આવું હોય છે. આમાં ઉદ્દેશ તે તે મૂળ વસ્તુ સૂચવવાનો હોતો નથી, પણ આકારોની મનોહર રચનાઓ કરવાનો હોય છે. પ્રતિકૃતિની લોલુપતા છોડી દઇ આકારરચનાના સૌષ્ઠવમાં રાચતી ચિત્રકલા એ કોઇ હલકી પ્રતિની કલા નથી. કેટલાક આધુનિક કલાવિવેચકોને મતે તો પ્રકૃતિમાં રાચતી ચિત્રકલા પ્રાકૃત છે, ખરી ચિત્રકલા તો કેવળ આકારથી ભાવ ઉત્પન્ન કરનાર ચિત્રમાં વસેલી છે. *

. . . .

પ્રાચીન ચિત્રોનો નિરીક્ષક જાણે છે કે લગભગ દરેક ચિત્રમાં અમુક મુદ્રા, અમુક કરવર્તના, અમુક દૃષ્ટિ, અમુક પાદચારી, અમુક અભિનય ઇત્યાદિ જોવામાં આવે છે. પણ નૃત્ય અને અભિનયમાં જે 'ગતિ'થી સધાય છે તે ચિત્રમાં 'સ્થિતિ'થી સાધવાનું હોય છે. આ સાધવાને માટે આકારોને જે રીતે રચવા જોઇએ તે રીતે રચવાનો પ્રયત્ન અમુક ચિત્રોમાં દેખાય છે. આવા ચિત્રોની કસોટી એ છે કે તે તે આકારો તે ભાવ સૂચવવા સમર્થ છે કે નહિ; નહિ કે તે આપણને રુચતાં માણસોની પ્રતિકૃતિ છે કે નહિ. સંભવ છે કે કેટલાંક ચિત્રોમાં આવા આકારો કોઇ પણ ભાવની પ્રતીતિ કરાવી શકતા ન હોય અને તેથી કેવળ બેહુદા જ લાગે. આવાં ચિત્રોમાં શૈલીનો દોષ નથી, તે તે ચિત્રકારનું અસામર્થ્ય દોષપાત્ર છે. વળી કેટલેક ઠેકાણે અમુક આકારનો 'સમય' આપણે ન જાણતા હોઇએ તેથી પણ ભાવપ્રતીતિ ન થાય. ગમે તેમ હોય, પણ આપણાં પ્રાચીન ચિત્રોમાં એવાં ઘણાં ચિત્રો છે જે પ્રતિકૃતિની મર્યાદાની ઉપેક્ષા કરે છે અને તેમ કરીને કોઇ એવી વેધક રીતે ભાવપ્રતીતિ કરાવે છે કે જે અન્યથા અશક્ય લાગે. આ ગ્રંથમાં એવાં ઘણાં ઉદાહરણો છે.

રસિકલાલ છો. પરીખ

* 'Art' by Clive Bell પ્રકરણ ૧-૩ Significant form and representationની ચર્ચા પૃ. ૨૩ ટિપ્પણ.

પશ્ચિમ ભારતની મધ્યકાલીન ચિત્રકળા

આઠમા સૈકાથી અજંતાની ચિત્રકળાની ગંગા કાળસાગરમાં લુપ્ત થયા બાદ હિંદુસ્તાનમાં ચિત્રકળાના તે પછીના અંકોડા ક્યાં યે પણ મળી આવતા હોય તો તે દસમાથી અઢારમા સૈકા સુધી સાહિત્ય સંસ્કૃતિ અને ધર્મના ઘેરા રંગે ફૂલતીફાલતી રહેલી, તાડપત્રો અને હસ્તલિખિત ગ્રન્થોમાં સચવાતી આવતી, કલ્પસૂત્રોની ચિત્રકળામાં છે. ભારતના મધ્યકાળના ઇતિહાસમાં જે વેળા ગુજરાત અનુપમ સ્થાન ભોગવતું હતું તે વખતે તેની ભાગ્યલક્ષ્મીના સ્વામીઓ ગુર્જર નરેશો અને જૈન મુત્સદીઓ હતા; એટલે તેમણે સ્થાપત્ય અને ઇતર કલાઓનો સમાદર કરી ઇતિહાસમાં અમર પગલાં પાડ્યાં છે એમના યુગનાં સ્થાપત્યસર્જનો અને શિલ્પસામગ્રીઓ તેમજ હસ્તલિખિત ગ્રંથોની સંખ્યાબંધ પ્રતો જોઇએ છીએ ત્યારે એમ જ લાગે છે કે તે યુગના માનવીઓ જો કેવળ રાજ્યો જીતવામાં, લડાઇઓ કરવામાં અને વહેમ તથા કુસંપમાં જ જીવન ગાળતા હોત તો આવું પ્રફુલ કલાસર્જન તેમને હાથે થવું અશક્ય જ હોત. પણ આઘેથી કાળનાં ચિત્રો જોનારને પ્રજાએ એ વચલા ગાળાઓમાં કેવી નિરાંત, શાંતિ અને સુખ-સંસ્કૃતિભરી જિંદગી માણી છે તેનો ખ્યાલ આ સ્વસ્થતાભરી, ચિંતનશીલ અને રંગસૌરભવાળી કલાસામગ્રીનો થાળ જોવાથી જ આવે તેમ છે.

મધ્યકાળના એ નમૂનાઓમાં સૌથી અગ્રસ્થાન ખંભાત અને પાટણમાંનાં તાડપત્રોનાં ચિત્રોને આપી શકાય. તેની એકબે પ્રતો જ ઉપલબ્ધ હોવા છતાં જે વસ્તુ આપણી સામે રજુ થાય છે તે ઉપરથી ખાત્રી થાય છે કે એ કાળના સમાજમાં ચિત્રકળા કોઈ આગલી પેઢીઓથી સચવાતી, ઉછેરાતી અને માન પામતી હોવી જ જોઇએ; નહિતો એ ગ્રંથોનાં ચિત્રોમાં જે રૂઢ થએલી પાકી શૈલીનો ઉપયોગ થયો છે તે ઉપલબ્ધ ન હોત. આ કળા અનાડી કે અણઘડ હાથમાં જન્મેલી નથી, પરંતુ અનેક પ્રકારનાં કૌશલ્યપૂર્વક રંગ અને રેખાની સજીવતા તથા રૂચિરચનામાં કાબેલ થએલા માનવીઓએ સિદ્ધ કરેલી શૈલી છે એમ આપણે સ્વીકારવું પડે છે. એની મુખ્ય ખૂબી તો સરળ રેખામાં આબેહૂબ કથાનિરૂપણ કરવાની તેની શક્તિમાં છે. વાઙ્મય સાથે ચિત્રકળા કેવો તાલ મેળવે છે એ દર્શાવવામાં આ શૈલી અવધિ કરી નાખે છે. આકૃતિઓ અને રંગોના અનેક સંકેતપૂર્ણ પ્રયોગો દ્વારા એ ચિત્રોમાં સાહિત્ય, વિચાર અને દૃષ્ટિને ઉદ્દીપ્ત કરે એવી એક નવી જ જાતની બિછાત બની રહે છે. જેઓ હાથમાં કલમ કે પીંછી લઇ જરાપણ આકૃતિ દોરી શકતા હશે તેમને તો આ ચિત્રોની ભૂમિકાની સમતોલ રંગભરણી, ઉપાડ કે ઊંડાણના પ્રયત્ન વગર આનંદસમાધિમાં ગરકાવ કરશે. આજ સુધી આ ચિત્રોનો મોટામાં મોટો સમુદાય જૈન ધર્મના ગ્રંથોમાંથી મળી આવ્યો હતો, એટલે તેને માત્ર ધર્મના સાંકેતિક સ્વરૂપો અથવા નિશાનીઓ જેવાં ગણી લઇ કલાના ઇતિહાસમાં તેનું સ્થાન નિર્ણિત કરવામાં આવ્યું નહોતું; પરંતુ જ્યારે ગુજરાત, માળવા અને રજપૂતાનામાંથી બીજા સંપ્રદાયો ને સાહિત્યગ્રંથોમાંથી પણ આ જ ચિત્રશૈલીના નમૂના હાથ લાગ્યા ત્યારે કલાનિષ્ણાતો સામે એક સળંગ ચિત્રપરંપરા તરવરવા લાગી અને આ ચિત્રોમાં કલામર્મવાળાં સ્વરૂપો સમાએલાં દેખાયાં.

કલ્પસૂત્રો જેવાં જ લક્ષણોવાળી કળા 'વસંતવિલાસ' અને શ્રી 'બાલગોપાળસ્તુતિ'માં પણ યોજાએલી છે, તે ઉપરથી ખાત્રી થાય છે કે મુગલ કળા ખીલી તે પહેલાં ગુજરાત, માળવા અને મારવાડના પ્રદેશોમાં આ ચિત્રશૈલીનો ઠીકઠીક પ્રચાર થઇ રહ્યો હશે. આ કળાનો પરિચય માત્ર શ્રીમાનો જ ભોગવતા નહિ હોય પણ લોકરંજની કળા તરીકે તે પ્રજાજીવનમાં પણ સ્થાન પામી હશે, એ તે સમયનાં છૂટાં ચિત્રામણો, વસ્ત્રો અને કોતરકામો ઉપરથી સમજાય છે; એટલેકે કળાકારો અને તેમની ચિત્રસામગ્રી લોકપરિચિત અને લોકરૂચિની જ હતી.

આ ચિત્રો ઝડપથી ખેંચી કાઢેલાં દેખાય છે, તેથી ચીતરનારની અનાવડત છે એમ તો કહી શકાય તેવું નથી. જેટલી ઝડપથી આપણે લખાણનો અક્ષર ખેંચીએ એટલી ઝડપથી આ ચિત્રકારો આંખ, નાક, માથું, હાથ, પગ અથવા વસ્તુઓ ચીતરી શકે છે. એમ માની શકાય કે આ ચિત્રકર્મ માટે ખાસ ચૂંટી કાઢેલા કેટલાક આધારભૂત આકારો નક્કી થઈ ગયા હશે. ચીતરનાર જે કાંઈ ચીતરે છે તેમાં માનવ દેહ વિષે તે સંપૂર્ણ સમજ રજૂ કરી શકે છે. જાતજાતના લોકો, તેમની હીલચાલ તેમજ મુદ્રાઓ તેને સુપરિચિત છે. વૃત્તાંત પર સચોટ લક્ષ્ય અને એકધારું ચિત્રાંકન એ તેનાં પ્રધાન લક્ષણો છે. તે વાહવાહ માટે ચિત્રકામ કરતો લાગતો નથી, પણ કોઇ રીતે ચિત્રમાંથી જ હકીકત પ્રકટ કરી શકાય તેની મથામણ તે કરે છે. એટલેકે વાંચતાં ન આવડતું હોય તેને પણ એ પાનામાંથી જાણવાનું અને જોવાનું મળી રહે અને ધર્મપ્રચારની સાર્થકતા સધાય.

ચિત્ર અને લિપિ બંને પવિત્ર આનંદજનક નેત્રવિહાર બની રહે તે માટે પ્રયત્નો કરવામાં આ ગ્રંથો શોભા-સમૃદ્ધિની ટોચ રજુ કરે છે. ઘૂંટેલી કાળી, ભૂરી કે લાલ ભોંય ઉપર અક્ષરો અને ચિત્રોની તકતીઓ યોગ્યરીતે સાચવીને હાંસીઆમાં જે વેલપટ્ટીઓ અને આકૃતિની વાડીઓ ભરી દીધી છે તેની તોલે આવે એવી પ્રાચીન પ્રતો જાણવામાં નથી. ધર્મના પવિત્ર ગ્રંથો માટે આવો સમાદર કુરાન, બાઇબલ, ગીતા વગેરેના શ્રીમંત માલિકો અને ધર્માધીપોએ બતાવ્યો છે; પણ કલ્પસૂત્રોની આવૃત્તિઓ સાથે હરીફાઇ કરી શકે એવો સમૂહ ભાગ્યે જ મળશે. (આ કથન માત્ર બહાર પડેલાં પુસ્તકોને આધારે છે.)

જૈન કલ્પસૂત્રોના હાંસીઆની ચિત્રસામગ્રી ઉપર તો હિંદના જાણીતા કલાવિવેચકોનું પણ ધ્યાન ખેંચાયું જણાયું નથી. તેનું કારણ આજ સુધી જોઇએ તેટલા પ્રમાણમાં કેટલીક અસલ વસ્તુઓ કોઇની જાણમાં પણ નહોતી એ કહી શકાય. હાંસીઆની એ અપૂર્વ કલાસમૃદ્ધિને દુનિયા આગળ રજૂ કરવાનું માન 'જૈન ચિત્રકલ્પદ્રુમ'ના સંપાદક શ્રી સારાભાઇ નવાબને જ છે. જે નમૂના તેમણે પ્રાપ્ત કરી પ્રકટ કર્યા છે તે માટે કળાના ઇતિહાસમાં તેમનું માન અને સ્થાન કાયમને માટે સ્વીકારવું પડશે. આ હાંસીઆની ચિત્રકળા જ એ યુગના માનવીઓની સર્જનશક્તિ અને અપ્રતિમ શોભાશક્તિના સંપૂર્ણ પુરાવા છે. કેવળ બે કે ચાર રંગમાં, આખા યે ગ્રંથના એકેએક પાને જુદીજુદી વેલપટ્ટીઓ, અભિનયભર્યાં પ્રાણીઓ તથા મનુષ્યોને ચીતરનારો ચિતારો આજના કળાકારને કસોટી આપે એવો છે. તેનું આશ્ચર્યકારક, વિપુલ અને વૈવિધ્યપૂર્ણ સર્જન અજંતાના ભંડારને પડકારે એવું છે. લૂંટાતાં, ચોરાતાં, વેચાતાં વધેલો પણ સંસ્કૃતિનો આ થાળ એટલો બધો સમૃદ્ધ છે કે આજના કલ્પનાકૃતિઓ (designs) માગનારાઓની ભૂખને તે સહજમાં સંતોષે છે.

ઘણી વખત ગ્રંથનાં પાનાંઓમાં હાંસીઆમાં એક ખૂણા પર લહીઆએ ચિત્રપ્રસંગની ટૂંકી નોંધ કરેલી જણાય છે. તે ઉપરથી લાગે છે કે અક્ષરો લખનાર પોતાનું કામ પૂરૂં કરી ચિતારાને ખાલી જગ્યાઓ ભરવા સોંપી દેતો હશે; એટલે ચિતારો કવિતાની પાદપૂર્તિની પેઠે પ્રસંગના સૂચક આકારોવાળી વેલપટ્ટીઓ અને ચિત્રો ઉમેરવાનું કામ કરતો હશે. કવિતાની કડીઓ છંદમાં બંધાતી આવે તેવી રૂપ અને આકૃતિમાળાઓની સમતોલ વહેંચણી કરતો તે છેવટના પાના સુધી પાઠ અને ચિત્રોને એકસરખો રસ સાચવી લે છે. આવી એકધારી યોજનાવાળાં પ્રકાશનો આજના સાધનસંપન્ન યુગમાં પણ વિરલ છે.

ધાર્મિક ચિત્રોમાં કથાપ્રસંગનાં પાત્રોનાં સ્વરૂપ આદ્ય કુલગુરુએ બાંધેલાં તેનાં તે જ સાચવવાનો સંપ્રદાય આગ્રહપૂર્વક પળાતો હોય તેમ લાગે છે, કારણકે તેમાં ભાગ્યે જ નવો પ્રકાર નજરે પડે છે. છતાં ક્વચિત્ ચકોર કળાકારો નવી ઊર્મિ અને છટા બતાવ્યા વિના રહેતા નથી; અને જ્યાંજ્યાં કંઇક સામાજિક વાતાવરણ બતાવવાનું હોય છે ત્યાંત્યાં તો તેમણે અવશ્ય છૂટ લઇને પોતાનો સમાજ ઉતાર્યો છે.

શ્રીપાલ રાસનાં ચિત્રો એ રીતે ચિત્રકારની સમકાલીન સૃષ્ટિનું ચિત્ર છે. આ ચિત્રોની ચિત્રકળાની કદર કરતાં સાથેસાથ તેમણે જે સાહિત્યો અને ક્રિયાઓથી આ પ્રતો તૈયાર કરી હશે તે પણ આશ્ચર્યકારક પ્રકાર ગણવો જોઈએ. તાડપત્રોને ચૂંટીને ચિત્ર યોગ્ય સફાઈ પર લાવવાં તેમજ ચિરસ્થાયી બનાવવાં, અને વિવિધ રંગો ઉખડી ન જાય એવી ક્રિયાથી ભૂમિકા પર તેમને સંલગ્ન કરવાં એ બધી વાતો આજના કલાકારને મહાન ભેદો જ રહેવાની. આજે ચિત્રના ચિરંજીવપણા માટે સાધનો કે રંગોની લેશમાત્ર પરવા કોઇ રાખતું નથી. તેઓને સૈંકડો વર્ષોથી તેમના સર્જકોના પ્રતિભાની સાખ પૂરતા આ નમૂના શરમમાં નાખે એવા છે. આ બાબતમાં તો કુશલ વૈજ્ઞાનિકો, કલાકારો અને પ્રાચીન શાસ્ત્રવિશારદોનું મંડળ એકાગ્ર થઈ કામે લાગે તો જ પુનરુદ્ધાર થઈ શકે.

આ ચિત્રોમાં શૈલીનું અનુકરણ, ઘૂંટાણ અને કેટલાક આકારોનાં બીબાં બરોબર સચવાયાં હોય છે એટલે આપણને વૃત્તાંતનો ઉકેલ જરા યે મુશ્કેલ પડતો નથી. વૃત્તાંત સાથે આપણને રિવાજો, વસ્ત્રો, ઘરો, ઉપરકરો વગેરેનો સારામાં સારો ખ્યાલ મળે છે. બારમીથી અઢારમી સદી સુધીનું લોકજીવન જોવું હોય તો આમાં મળી શકે.

આ ચિત્રોની બીજી ખૂબી એ છે કે સાધારણમાં સાધારણ માણસને પણ ચિત્ર સમજાય એવી રીતનો તેમાં પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. તડકો હોય ત્યારે આખું ચિત્ર પીળા રંગમાં જ ચીતર્યું હોય. રાત્રિ હોય ત્યારે ભૂરા રંગ પર જ ચીતરાયું હોય. ઘરમાં રાત્રિ હોય અને દીવો ચીતર્યો હોય તો બધું લાલ ભૂમિ ઉપર આલેખ્યું હોય. વળી પ્રસંગ પ્રમાણે ઋતુ તથા કાળ દર્શાવતાં માણસો અને જનાવરોથી આપણે બધું તરત અટકળી શકીએ છીએ. નદી સરોવર કે કુંડ, તેના પાણીનાં વમળોની રેખાઓથી જ સમજાઇ જાય છે. વૃક્ષો ફળો વનસ્પતિઓ વગેરે બરોબર ઓળખાય તેમ તેનાં પાન થડ વગેરે ચીતરાએલાં નજરે પડે છે. વાસ્તવિક દર્શન કરતાં આ લાક્ષણિક દર્શન ચિત્રણાના નિયમોમાં વધુ ઉપયોગી ગણાયું છે.

આજ સુધી ભારતીય ચિત્રકળાના ઇતિહાસમાં ગુજરાતનો નામોલ્લેખ નહોતો, પરંતુ મધ્ય યુગના આ ચિત્રકળાના નમૂના માત્ર ગુજરાતમાં જ મળ્યા હોવાથી ગુજરાતને તેથી ગૌરવ પ્રાપ્ત થયું છે. આ પ્રાચીન ચિત્રાકૃતિઓની છાયા રાજપૂત કળામાં કેમ ઊતરી ને મુગલ કળાને સમૃદ્ધ કરવામાં આનુવંશિક ઉપકાર કેવી રીતે થયો તેના અંકોડા તો હજી બેસાડવાના રહે છે જ; તોપણ જે સ્થાપત્ય-રચનાઓ અને વસ્ત્રો આ ચિત્રોમાં દેખાય છે તે આજે પણ નહિ બદલાએલા સમાજમાં નજરે પડે છે.

ચતુર દૃષ્ટિવાળા કલાવિવેચકો આ કળાના નમૂના જોતાં જ તેની potency—સર્જક અને પ્રેરક શક્તિ સ્વીકારશે, એટલું જ નહિ પણ દેશની કળાને તેમાંથી નવો માર્ગ જડશે એમ માનવું ભૂલભરેલું નહિ ગણાય. આજે કળા એટલે શાળાપાઠિત વસ્તુ નહિ, પણ પ્રજાની ઊર્મિ અને ઉલ્લાસમાંથી સર્જાએલી નવસૃષ્ટિ એમ સ્વીકારીએ તો નવસર્જનના પાયામાં યે આ કળાનાં તત્ત્વો ઉપયોગી થઇ પડવાનાં જ.

રવિશંકર મ. રાવળ

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત ચિત્રકળા

ગ્રંથસ્થ જૈન ચિત્રકળા

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા જુદાજુદા વિભાગોમાં વહેંચાએલી છે. મુખ્યત્વે કરીને તે જૈન મંદિરોના સ્થાપત્યમાં તથા જૈન ધર્મના હસ્તલિખિત ધર્મગ્રંથોમાં મળી આવે છે.

આ બે અંગો પૈકી સ્થાપત્યકળાનો પ્રદેશ બહુ જ વિસ્તૃત હોવાથી તે વિષય ભવિષ્ય ઉપર રાખીને પ્રસ્તુત ગ્રંથમાં તેનાં એ બે મહત્ત્વનાં અંગો પૈકીના એક અંગ તેના ધર્મગ્રંથોની કળાનો મળી શકતો ઇતિહાસ આપવાનો મારો ઉદ્દેશ છે.

છેલ્લાં પાંચ વર્ષ દરમ્યાન ગુજરાતનાં મુખ્ય મુખ્ય શહેરોમાં આવેલા જૈન ગ્રંથભંડારો મધ્યેની ચિત્રવાળી હસ્તપ્રતોના અભ્યાસ અને બારીક અવલોકનના પરિણામે જે મારી જાણમાં આવ્યું છે તેનું ટૂંક વર્ણન અત્રે રજુ કર્યું છે. મારી પહેલાંના કામ કરનારાઓએ તેમને મળેલી અથવા જ્ઞાત થએલી એવી થોડી પ્રતોમાં જ પોતાનું ક્ષેત્ર સંકુચિત કર્યું છે.

ભારતની રાજપુત અને મોગલ કળાની પહેલાં, એટલેકે સોળમી સદીના છેલ્લા સમય પહેલાં લઘુ પ્રમાણનાં છબિચિત્રોની બે જાતની ચિત્રકળા મળી આવે છે. આ બે જાતમાંથી એક જાત નેપાળ અને ઉત્તર બંગાલ તરફની અગિયારમી સદીના સમયની મળી આવે છે, અને બીજી ગુજરાત કાઠિયાવાડ અને રાજપુતાના બાજુની અગિયારમી સદીના અંત સમયથી મળી આવે છે. આ બંને જાતની કળાઓમાં એકબીજીનું અનુકરણ કોઈ રીતે થયું હોય, એટલે કે એક-બીજી કળાને સીધો સંબંધ હોય એમ લાગતું નથી; પરંતુ તે બંને કળાઓ પ્રાચીન ભારતવાસીઓએ પોતાની મેળે—સ્વતંત્રરીતે ઉપજાવી કાઢેલી છે. પૂર્વ ભારતની ચિત્રકળા મુખ્યત્વે બૌદ્ધધર્મના ગ્રંથોમાં અને પશ્ચિમ ભારતની ચિત્રકળા મુખ્યત્વે શ્વેતાંબર જૈનોના હસ્તલિખિત ધર્મગ્રંથોમાં મળી આવે છે.

આ ચિત્રકળાને ત્રણ વિભાગમાં વહેંચી નાખવી જોઈએ.

પ્રાચીન સમયની આ ચિત્રકળા તાડપત્રની હસ્તપ્રતોમાં મળી આવે છે અને તાડપત્રની એ ચિત્રકળા બે વિભાગમાં વહેંચાએલી છે. પહેલા વિભાગની શરૂઆત સોલંકી રાજ્યના ઉદયથી થાય છે. મહારાજાધિરાજ સિદ્ધરાજ જયસિંહદેવના રાજ્યકાળની શરૂઆતમાં જ વિ.સં. ૧૧૫૭ (ઇ.સ.૧૧૦૦) માં ગુજરાતના પ્રાચીન બંદર ભૃગુકચ્છ (ભરૂચ)માં લખાએલી નિશીથચૂર્ણિની પ્રત હજી વિદ્યમાન છે, જે પાટણના સંઘવીના પાડાના ભંડારમાં આવેલી છે. જેના ઉપર તારીખ લખેલી છે તેવી આજ દિન સુધીમાં મળી આવેલી ગુજરાતની જૈનાશ્રિત ચિત્રકળાની સૌથી જૂનામાં જૂની ચિત્રવાળી પ્રત આ એક જ છે. પહેલા વિભાગનો અંત પણ એ જ ભંડારની વિ.સં. ૧૩૪૫ (ઈ.સ.૧૨૮૮)ની સાલમાં લખાએલી જુદીજુદી પ્રાકૃત કથાઓની તાડપત્રની પ્રતમાંનાં ચિત્રોથી આવે છે; કારણ કે વિ. સં. ૧૩૫૬ (ઇ.સ. ૧૨૯૯)ની સાલ પછીનાં ચિત્રોની ચિત્રકળામાં બહારની બીજી કળાઓનું મિશ્રણ થોડેઘણે અંશે જણાઈ આવે છે. તાડપત્ર ઉપરનાં ચિત્રોના બીજા વિભાગની શરૂઆત વિ.સં. ૧૩૫૭ (ઈ.સ. ૧૩૦૦)થી થાય છે અને તેનો અંત લગભગ વિ.સં. ૧૫૦૦ (ઇ.સ. ૧૪૪૩)ની આસપાસમાં આવે છે. આ બીજા વિભાગના સમય દરમ્યાનની ત્રણ હસ્તલિખિત પ્રતો મારા જાણવામાં આવેલી છે, જેમાંની એક પ્રત ઉપર વિ.સં. ૧૪૨૭ (ઈ.સ. ૧૩૭૦)ની તારીખ નોંધાએલી છે અને તે અમદાવાદની ઉજમફોઇની ધર્મશાળાના ગ્રંથભંડારમાં આવેલી છે.

આ બીજા વિભાગના સમય દરમ્યાનનાં કેટલાંક ચિત્રો તો લાકડાની પાટલીઓ કે જે તાડ-પત્રની ઉપર નીચે બાંધવામાં આવતી હતી તેના ઉપર તથા કપડાં ઉપર પણ મળી આવે છે.

લાકડાની એવી બે પાટલીઓ વિ.સં. ૧૪૨૫ (ઈ.સ. ૧૩૬૮)માં ચીતરાએલી તારીખની નોંધવાળી મળી આવેલી છે, અને કપડાં ઉપરનાં ચિત્રો વિ.સં. ૧૪૧૦ (ઈ.સ. ૧૩૫૩)થી મળી આવે છે.

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળાના ત્રીજા વિભાગનાં ચિત્રો મુખ્યત્વે કાગળની હસ્તલિખિત પ્રતોમાં મળી આવે છે. તેની શરૂઆત ઈ.સ. ની પંદરમી સદીની શરૂઆતથી થઈ હોય એમ મારું માનવું છે. જોકે રાવ બહાદુર ડૉ. હીરાનન્દ શાસ્ત્રી પાસે એક પ્રત વિ.સં. ૧૧૨૫ની સાલની લખાએલી મેં જોએલી છે; પરંતુ મારી માન્યતા પ્રમાણે તે તારીખ નકલ કરનારે જૂની જે પ્રત ઉપરથી નકલ કરી હશે તેની તે કાયમ રાખેલી છે, જે તે પ્રતમાંનાં ચિત્રો માટે ઉપયોગમાં લેવામાં આવેલી સોનેરી શાહી તથા ચિત્રો દોરવાની ચિત્રકારોની રીત ઉપરથી નિષ્પક્ષ નિરીક્ષકને સહેજે જણાઈ આવે છે. તેથી તે પ્રત પંદરમી સદી પહેલાંની નથી જ એમ હું માનું છું. આ ત્રીજા વિભાગની કળાનો અંત વિક્રમની સોળમી સદીના અંત સમય દરમ્યાન આવે છે, જે વેળા ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા પ્રથમ મુગલ અને પછી રાજપુત કળાની અસર નીચે આવી ગઇ હતી; અને તે પછી અઢારમા સૈકામાં તો સમકાલીન રાજપુત કળા જે લગભગ નષ્ટ થવા આવી હતી તેમાં ગુજરાતની આ જૈનાશ્રિત કળા સંપૂર્ણપણે સમાઇ ગઇ.

આ ત્રીજા વિભાગના સમય દરમ્યાનનાં જૈન સિવાયનાં બીજાં ચિત્રો વૈષ્ણવ સંપ્રદાયના ગણ્યાગાંઠ્યા ધર્મગ્રંથોમાં મળી આવે છે. પરંતુ પંદરમી સદી પહેલાંનાં ગ્રંથસ્થ ચિત્રો જૈન શ્વેતાંબર કોમના ધર્મગ્રંથોમાં જ મળી આવે છે, અને આ જ કારણથી આ કળાને કેટલીક વખત 'જૈન' અગર 'શ્વેતાંબર જૈન' કળાના નામથી સંબોધવામાં આવેલી છે.

કેટલાક વિદ્વાનો આ કળાને 'ગુજરાતી કળા'ના નામથી ઓળખાવે છે. પરંતુ પ્રસ્તુત ગ્રંથમાં રજુ કરેલા પુરાવાઓ ઉપરથી આપણે જાણી શકીશું કે આ કળાનો વિકાસ એકલા ગુજરાતમાં જ નહિ પણ પશ્ચિમ ભારતના દરેક પ્રદેશમાં થએલો હતો. ઉ.ત. સ્વર્ગસ્થ મુનિમહારાજ શ્રીહંસવિજયજીના વડોદરાના સંગ્રહમાં આવેલી કલ્પસૂત્રની સુવર્ણાક્ષરી પ્રત વિ.સં. ૧૫૨૨માં રાજપુતાનામાં આવેલા યવનપુર (જોનપુર)માં લખાએલી છે. બીજી એક સુવર્ણાક્ષરી કલ્પસૂત્રની પ્રત વડોદરામાં વયોવૃદ્ધ ગુરુદેવ પ્રવર્તક શ્રીકાંતિવિજયજીના સંગ્રહમાં છે, તે માળવામાં આવેલા મંડપદુર્ગ (માંડવગઢ)માં લખાએલી છે. ત્રીજી પ્રત ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રની સંવત ૧૫૨૯માં મંડપદુર્ગમાં લખાએલી અમદાવાદના દેવશાના પાડાના ઉપાશ્રયમાં આવેલા શ્રી દયાવિમલજી શાસ્ત્રસંગ્રહમાં આવેલી છે. આ સિવાય બીજી ઘણી પ્રતો માંડવગઢ વગેરેમાં લખાએલી મળી આવે છે. આ તથા બીજા પુરાવાઓ ઉપરથી આ કળાને 'ગુજરાતી કળા'ને બદલે આપણે અગાઉ જણાવી ગયા તેમ 'ગુજરાતની કળા' (પ્રાચીન વ્યાપક અર્થમાં) તરીકે સંબોધવી વધારે વાસ્તવિક છે. આ કળાનો પ્રચાર આખા પશ્ચિમ ભારતમાં થવાનું એક કારણ એ પણ હોય કે પ્રાચીન ગુજરાતના સ્વતંત્ર હિંદુ રાજવીઓના અજેય બાહુબળના પ્રતાપે તે મુલકો ગુજરાત પ્રદેશની છાયા નીચે હોવાથી સંભવિત છે કે ગુજરાતના ચિત્રકારો ત્યાં જવાને લીધે આ કળાનો પ્રચાર પશ્ચિમ ભારતના સઘળા પ્રદેશોમાં થયો હોય. બીજું કારણ એ છે કે આ કળાના પ્રાચીન સમયના તાડપત્રના જે નમૂનાઓ મળી આવ્યા છે તે સઘળા જ મુખ્યત્વે કરીને ગુજરાતના પ્રાચીન પાટનગર અણહિલપુર પાટણ તથા તે વખતના પ્રખ્યાત બંદર ભૃગુકચ્છ (ભરૂચ)ના છે.

ગુજરાતની આ જૈનાશ્રિત કળાનો સંપ્રદાય ભારતીય ચિત્રકળાના ઇતિહાસ માટે બહુ જ મહત્ત્વનો છે. તેનું એક કારણ તો એ છે કે આ ચિત્રકળાના નાના અગર મોટા દરેક ચિત્રે કેટલા યે સૈકાઓ સુધી અજંતા, બાઘ અને એલોરાની ગુફાઓનાં ભિત્તિચિત્રોની પરંપરા જાળવી રાખી છે. બીજું કારણ એ કે તે સ્વચ્છતા અને સુંદરતામાં ઘણી જ આગળ પડતી અને પ્રખ્યાતિમાં આવેલી

રાજપુત અને મુગલકળાની જન્મદાત્રી છે. ત્રીજી બાજુએ કેટલાક દાખલાઓમાં તેની સાથે ઇરાની કળાનું મિશ્રણ થએલું છે.

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળાનાં નાનાં છબિચિત્રોની આટલી બધી ઉપયોગિતા હોવા છતાં તેના તરફ બહુ જ ઓછું ધ્યાન આપવામાં આવ્યું છે તેથી તેમજ તેના ઉપરનાં બહુ જ થોડાં લખાણો પ્રસિદ્ધિમાં આવેલાં હોવાથી હજુ સુધી કેટલાક વિદ્વાનોને આ કળા તદ્દન અજ્ઞાત છે.

અજાણ રહેવાનું એક કારણ એ પણ છે કે જૈન ગ્રંથભંડારો સિવાય ભારતનાં મ્યૂઝિયમોમાં તેમજ પાશ્ચાત્ય પ્રદેશોમાં તેની જે પ્રતો જોવામાં આવે છે તે, મળી આવતી પ્રતોના સોમા ભાગની પણ નથી. ભારતના જૈન ગ્રંથભંડારોમાં તેમજ જૈન સાધુઓ તથા જૈન ધનાઢ્યોના ખાનગી સંગ્રહમાં બધી મળીને હજારો હસ્તપ્રતો હજુ અણશોધી પડી છે. બીજું કારણ વસ્તુના અજ્ઞાતપણાને લીધે તેના વહીવટદારોની તે નહિ બતાવવાની સંકુચિતતા છે. કેટલાક દાખલાઓમાં આ સંકુચિતતા વ્યાજબી પણ છે.

ગુજરાતની આ જૈનાશ્રિત કળાના નમૂનાઓ પરદેશમાં મુખ્યત્વે કરીને નીચેનાં સ્થળોએ આવેલા છે: ઇંગ્લંડમાં બ્રિટિશ મ્યૂઝિયમમાં, ઇંડિયા ઑફિસની લાયબ્રેરીમાં, રૉયલ એશિયાટિક સોસાએટીની લાયબ્રેરીમાં, બૉડલીઅન લાયબ્રેરીમાં, કેમ્બ્રિજ યુનિવર્સિટીની લાયબ્રેરીમાં; જર્મનીમાં Staats Bibliothek અને મ્યૂઝિયમ fur Volkernkunde બંને બર્લિનમાં; ઑસ્ટ્રિયામાં વીએનાની યુનિવર્સિટીની લાયબ્રેરીમાં; અને ફ્રાન્સમાં Strasbourgની લાયબ્રેરીમાં. કદાચ થોડી-ઘણી ઇટાલીના ફ્લૉરેન્સની લાયબ્રેરીમાં પણ હોય. અમેરિકાના યુનાઇટેડ સ્ટેટ્સમાં ખાસ કરીને બૉસ્ટન મ્યૂઝિયમમાં કે જ્યાં (ભારતીય જૈન ગ્રંથભંડારો બાદ કરીએ તો) પરદેશમાંનો આ કળાનો સારામાં સારો સંગ્રહ છે; વૉશિંગ્ટનમાં ફ્રીઅર ગૅલેરી ઑફ આર્ટમાં, ન્યૂ યૉર્કમાં મેટ્રોપૉલિટન મ્યૂઝિયમમાં, ડેટ્રૉઇટના આર્ટ મ્યૂઝિયમમાં તથા ઘણા અમેરિકન ધનકુબેરોના ખાનગી સંગ્રહોમાં આ ચિત્રો આવેલાં છે. આ પ્રમાણે પશ્ચિમના પ્રદેશોમાં બહુ જ થોડી જગ્યાઓએ પ્રતો ગએલી હોવાથી પણ ઘણા પાશ્ચાત્ય વિદ્વાનો આ ગુજરાતની જૈનાશ્રિત ચિત્રકળાથી અજાણ્યા હોવાનું સંભવી શકે છે. પરંતુ હવે એવો સમય આવી લાગ્યો છે કે ભારતીય ચિત્રકળાના અભ્યાસીઓને આ કળાથી અજ્ઞાત રહેવાનું પાલવી શકે જ નહિ.

ગુજરાતની આ જૈનાશ્રિત કળા જે મુખ્યત્વે નાનાં છબિચિત્રોની કળા છે તેને, જેના ઉપર તે ચીતરવામાં આવી છે તેના પ્રકાર પ્રમાણે જો વહેંચી નાખવામાં આવે તો તે ચાર વિભાગમાં વહેંચાઈ જાય છે. આ ચાર વિભાગમાં પહેલા વિભાગની કળાનાં બધાં ચિત્રો તાડપત્રની હસ્તલિખિત પ્રતો ઉપર ચીતરેલાં કાયમ છે, જે ચિત્રોને આપણે ઉપર એ વિભાગમાં વહેંચી નાખ્યાં છે. બીજા વિભાગનાં ચિત્રો તાડપત્રની પ્રતોની ઉપર નીચે બાંધવામાં આવતી લાકડાની પાટલીઓ ઉપર ચીતરેલાં જોવામાં આવે છે. ત્રીજા વિભાગનાં ચિત્રો કપડાં ઉપર અને ચોથા વિભાગનાં કાગળ ઉપર ચીતરાએલાં મળી આવે છે. પાછળના ત્રણ વિભાગનાં ચિત્રોને આપણે ઉપર ત્રીજા વિભાગમાં સમાવી દીધાં છે, તેનું કારણ લાકડા તથા કપડાં ઉપરનાં ચિત્રો માત્ર ગણ્યાગાંઠ્યાં મળી આવ્યાં છે તે છે. તાડપત્રની કળાને આપણે 'પ્રાચીન કળા'ના નામથી સંબોધન કર્યું છે. ઇ.સ. ચૌદસો પચાસમું વર્ષ તાડપત્રની કળા તથા કાગળની કળાના ભાગલા વહેંચવા માટે યોગ્ય હોય એમ મને લાગે છે. પ્રાચીન તાડપત્ર ઉપરની નાનાં છબિચિત્રોની કળા ઇ.સ.ના પંદરમા સૈકાના ઉત્તરાર્ધ પછી તદ્દન લુપ્ત થઇ ગઇ હોય એમ દેખાય છે.

કળાની દૃષ્ટિએ આ કળાનું વિવેચન

કળાનિર્માણની દૃષ્ટિથી ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળા એ નાનાં છબિચિત્રોની કળા છે અને તે બહુ જ મજાનો વિષય છે. નાનાં બૌદ્ધ છબિચિત્રોના આલેખનનું અનુકરણ તેમાં નથી. ભારતીય ચિત્ર-કળાના ઇતિહાસમાં સુંદર કળાનિર્માણ અર્થે અગાઉના એક પણ દૃષ્ટાંત વિના મૂળ બનાવટ નહિ, પણ તેના ઉપયોગ સારૂ ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળાને માન ઘટે છે. પ્રાચીન ગુજરાતની આ કળા એ ગંભીર કળા છે; તેમજ શારીરિક અવયવોનું યથાર્થ દિગ્દર્શન કરાવનારી આ કળા ઘણી જ સુંદર ચિત્રકળાની રચના સારૂ પંકાએલી છે, એટલું જ નહિ પણ કળાની નિપુણતા ઉપરાંત તેની અંદર અત્યંત હાર્દિક ખૂબી રહેલી છે. થોડાંએક ચિત્રો જોકે કઠોર અને ભાવશૂન્ય હોય તેમ લાગે છે, તોપણ કેટલીક વખત મુખમુદ્રાલેખન અને લાવણ્યમાં તે ચડી જાય છે. ચિત્રના રંગોની પસંદગી તો ઘણા ઊંચા પ્રકારની છે. તાડપત્ર ઉપરની કળા બહુ જ ઊંચી કક્ષાની છે, જોકે તેના વિષયો બહુ મર્યાદિત છે. પાછળથી તેરમા સૈકાની એક પ્રતમાં તો કુદરતી દૃશ્યો પણ ચીતરેલાં મળી આવ્યાં છે. ચૌદમા સૈકાના અંત ભાગમાં આ કળાના સૌથી ઉત્તમમાં ઉત્તમ નમૂનાઓ મળી આવ્યા છે. કાગળ ઉપરની કળા પણ કેટલાક દાખલાઓમાં બહુ જ ઊંચી કક્ષાની છે. જાજરમાન સુવર્ણમય અથવા રક્તવર્ણ પૃષ્ઠભૂમિ ઉપર આલેખેલા આસમાની, શ્વેત તેમજ વિવિધ રંગો બહુ જ આનંદ આપે છે. ખરેખર ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળાનું જો કોઈ ખાસ મહત્ત્વનું લક્ષણ હોય તો તે ખાસ શોભાયમાન ચિત્રોથી હસ્તપ્રતો શણગારવાનું હતું. ચળકતા સુવર્ણરંગી અને વિધવિધ રાતા રંગના સુંદર રંગથી રંગવાની કળા કળાકારની ખૂબીમાં ગૌણ ન હતી પણ તે તો તેનો મુખ્ય પાયો હતો. વળી અલંકાર અને શારીરિક અવયવોની દરેક ઝીણવટમાં માપ અને આકારનું ચોક્કસ જ્ઞાન ચિત્રકારની અલંકરણ કરવાની તીવ્ર લાલસાથી અંકાએલું છે.

યદ્યપિ ચિત્રકારે તેજ અને છાયાનો ઉપયોગ ચિત્રને ઉઠાવવામાં–બહાર પડતાં દેખાડવામાં–કર્યો નથી. તોપણ એમ માની લેવું નહિ કે કળાકારે ત્રણ જગ્યામાં–લંબાઇ ઊંડાઈ અને પહોળાઈમાં–અવગાહતી મૂર્તિઓ (plastic form)ને દોરવાને જરા યે પ્રયત્ન કર્યો નથી. આ દેખાવ ભરાવદાર અંગો દોરીને, વખતે દાઢી આદિ વળાંકને પ્રમાણ કરતાં વધારીને તેઓ કરતા; અને ચિત્ર આપણે બાજુએથી જોતા હોઇએ તેવું બતાવતી વેળા તો કળાકાર બંને આંખોને એવી રીતે દોરતો કે આપણને છબિ તદ્દન સપાટ જ લાગે.

ચિત્ર ચીતરવાની રીત

ગુજરાતની જૈનાશ્રિત કળાના ત્રણે વિભાગ દરમ્યાનનાં ચિત્રો સામાન્ય રીતે મળતાં દેખાય છે; જોકે પ્રતો બનાવવાના પ્રકાર જુદીજુદી રીતના દેખાય છે. મુખ્યત્વે લખનાર અને ચીતરનાર વ્યક્તિઓ અલગ અલગ હોય તેમ લાગે છે, તોપણ કેટલાક દાખલાઓમાં લખનાર ને ચીતરનાર એક પણ હોય છે. આજે પણ વયોવૃદ્ધ આચાર્ય મહારાજશ્રી જયસૂરીશ્વરજી પોતાની જાતે જ પ્રતો લખે છે અને તેમાં ચિત્રો ચીતરે છે. અક્ષરો લખનારો ચિત્ર ચીતરનાર માટે અમુક જગ્યા છોડી દેતો. આ વાત પ્રતોની બારીક તપાસ કરવાથી જણાઈ આવે છે. પ્રતના અક્ષરો ચિત્રોની જગ્યા છોડીને ધારાબદ્ધ ચાલ્યા આવતા દેખાય છે; અને કેટલાક દાખલાઓમાં તો ચિત્રકારની સમજ માટે હાંસીઆમાં પ્રસંગને લગતું લખાણ પણ લખેલું મળી આવે છે, કે જેને ચિત્રકાર મુખ્યત્વે અનુસરતો. લખનાર બહુધા પોતાનું કામ પૂરૂં કરતો ત્યારે તે પ્રત ચિત્રકારને સુપ્રત કરતો હોય એમ સ્પષ્ટ જણાઇ આવે છે. નાનાં ચિત્રોના આલેખનમાં પત્ર ઉપર ખાસ રાખેલી જગ્યામાં તાડપત્ર ઉપર લાલ રંગ અને કાગળ ઉપર પ્રવાહી સુવર્ણની શાહી અથવા સુવર્ણનાં ઝીણામાં ઝીણાં પાનાં (વરખ કે જેનો આજે પણ જૈન મંદિરોમાં જિનમૂર્તિની અંગરચના કરવા માટે ઉપયોગ કરવામાં

આવે છે), જેટલી જગ્યામાં ચિત્ર દોરવાનું હોય તેટલી જગ્યામાં, પ્રથમ લગાડવામાં આવતાં. તેની પાછળની પૃષ્ઠભૂમિ મોટે ભાગે ઘેરા રાતા રંગમાં કરવામાં આવતી અને સોના ઉપર રંગની ભૂકી એવી રીતે લગાડવામાં આવતી કે ચિત્ર પોતે સુવર્ણમય જ લાગે. બાહ્ય રેખાઓ અને આંખો, આંખનાં પોપચાં, કાન, આંગળીઓ વગેરે પછીથી કાળા રંગમાં રંગવામાં આવતાં હતાં. જૈન છબિચિત્રો આ રીતે દોરવાનું પરિણામ એ આવ્યું કે સ્ત્રી અને પુરુષોની મુખાકૃતિઓ, તેમનાં વસ્ત્રો અને પુષ્પાદિથી રચેલા બીજા અલંકારો જાણે સોનાથી સપાટ ચીતરેલાં હોય એમ જણાય છે. ચિત્રને જ્યારે આપણે બાજુ ઉપરથી તપાસતા હોઈએ ત્યારે જણાય છે કે આવી છબિના ચહેરામાં નાકને કેટલીક વખત લાલ રંગથી રંગવામાં આવતું હતું.

આ રીતે ચિત્ર તો સંપૂર્ણ દોરાતું; પણ હવે તેમાં રંગ પૂરવાને પીછી ઉપર આસમાની રંગ લેવાતો અને વસ્ત્ર તથા બીજા ભાગો ઉપર તે જરૂર પૂરતો મૂકવામાં આવતો; તેમજ મનુષ્ય અને પ્રાણીઓના શરીરના ગોળ ભરાવદાર ભાગો જેવી કેટલીક જગ્યાઓ એ જાડી પીછીથી રંગ પૂરીને તે પ્રમાણમાં ઘટ્ટ–સ્થૂલ દેખાય તેમ કરાતું. શ્વેત ખાલી જગ્યાઓ કોઈક વાર ઇરાદાપૂર્વક રાખવામાં આવતી, પણ ક્યારેક સુવર્ણનાં પાનાં ચોટાડતાં અકસ્માતથી પણ રહી જતી. સાધુઓનાં સફેદ કપડાં બતાવવા માટે તો મોતીના રંગ જેવો ધોળો રંગ ક્યારેક વપરાતો.

બહુ જ ઓછા પ્રસંગે એક પાંચમો રંગ વપરાશમાં લેવાતો. એ રંગ તે બહુ જ સુંદર ઘેરો મોરથુથા જેવો લીલો રંગ. પ્રાચીન હસ્તપ્રતોના ચીતરનારાઓના રંગસંભારમાં આ સિવાય બીજા કોઈપણ રંગો મળી આવતા નથી. પણ પછીના વખતની કાગળના સમયની હસ્તપ્રતોમાં કેટલીકવાર સુવર્ણરંગની જગ્યા પીળા રંગે અને રાતા રંગની પૃષ્ઠભૂમિની જગ્યા આસમાની રંગે લીધેલી લાગે છે.

જૈનાશ્રિત કળાનાં નાનાં છબિચિત્રો દોરવામાં શરીરના પ્રત્યેક અંગ પ્રત્યંગ દોરવાની રચના વાસ્તવિક તુલના ઉપર બાંધવામાં આવતી હતી. શિલ્પકળાના શૃંગાર આમાં મુખ્ય ભાગ ભજવે છે.

કોતરકામવાળી ઊપસેલી વેલો અને છોડવાઓ કાં તો એક જ શૈલીના બનાવાતા અગર કુદરત ઉપરથી પણ બનાવવામાં આવતા. પશુઓ અને પક્ષીઓનાં ચિત્રો, ખાસ બ્લુ રંગથી રંગેલા રાજહંસો, સફેદ રંગના હાથીઓ, ઘોડાઓ, હરણો, વિવિધ જાતનાં નૃત્યચિત્રો વગેરે કિનારીની ઉપર તથા આજુબાજુના હાંસીઆઓમાં શોભા આપનારા પદાર્થો તરીકે યોજવામાં આવતા; તેમજ જૈન ધર્મનાં આઠ પવિત્ર પ્રતીકો–અષ્ટ મંગલ–નો તથા ચૌદ સ્વપ્નાદિનો પણ તેવી જ જાતનો ઉપયોગ કરવામાં આવતો.

આ કળાનાં આ નાનાં છબિચિત્રોનું અસ્તિત્વ ન હોત તો આપણને તે જૂના કાળનો પરિચય નહિવત્ અથવા બહુ જ અલ્પ હોત. આ ચિત્રો તે સમયના જીવનનું અને સંસ્કારનું જે જ્ઞાન આપણને પૂરું પાડે છે તે બહુ જ કિંમતી છે. ખરેખર તે ઉપરથી આપણે જન્મથી માંડી મરણ પર્યંતના સમસ્ત જીવનના દરેક ભાગનું વિશ્વસનીય અને બહુવિધ દૃશ્ય પ્રાપ્ત કરી શકીએ છીએ.

આવાં નાનાં છબિચિત્રોમાં ચીતરાએલી વ્યક્તિઓના ચહેરાની તાદૃશ્યતા કે તેમના ચારિત્ર્યની છાપ તેમાં પાડવાની શક્તિ એ ચિત્રકારોમાં હોય એમ ઇચ્છવું એ વધારે પડતું ગણાય. વસ્તુતઃ સર્વે મહાપુરુષો અને સાધુઓ, દેવો અને દેવીઓ, રાજાઓ અને રાણીઓ, સુભટો અને સ્ત્રીપુરુષો જે પ્રાચીન ચિત્રકારોએ ચીતર્યાં છે તે જાણે એક ચોક્કસ બીબામાંથી નીકળ્યાં હોય તેવાં જણાય છે.

સુપ્રસિદ્ધ કલામર્મજ્ઞ ડૉ. આનંદકુમારસ્વામી આ કળાને નીચેના શબ્દોમાં અભિનંદન આપે છે:

'That the handling is light and casual does not imply a poverty of craftsmanship (the quality of roughness in 'primitives' of all ages seems to unsophisticated observers a defect), but rather perfect ade-

quacy; it is the direct expression of a flashing religious conviction and of freedom from any specific material interest. This is the most spiritual form known to us in Indian painting, and perhaps the most accomplished in technique, but not the most emotional nor the most intriguing. Human interest and charm, on the other hand, are represented in Ajanta painting and in late Rajput art.' અર્થાત્-હથોટી હળવી અને પ્રાસંગિક હોય તેટલા ઉપરથી કળાનૈપુણ્યની ઊણપ છે એમ ફલિત થતું નથી. (દરેક યુગનાં પ્રાથમિક ચિત્રોનું ખરબચડાપણું સામાન્ય જોનારને તો ખામી રૂપ જ દેખાય છે.) ઊલટું પૂર્ણ સંયોજન જણાય છે; કારણકે તે સતેજ ધર્મશ્રદ્ધા અને જડ વસ્તુ પરના રાગની મુક્તિના સીધા પરિણામરૂપ છે. ભારતીય ચિત્રકળાનું આ અતિ આધ્યાત્મિક, અને કૌશલ્યમાં કદાચ શ્રેષ્ઠ નિપુણતાવાળું સ્વરૂપ છે, જોકે તે બહુ ભાવનાત્મક કે અટપટું નથી. બીજી બાજુ, અજંતાનાં ચિત્રોમાં અને પાછળની 'રાજપુત કળા'માં માનુષી રસ અને સૌંદર્ય પ્રતિષ્ઠિત કરેલાં છે.'

આ કળાની ખાસ વિશિષ્ટતાઓ

આ કળાનાં ચિત્રોની ખાસ વિશિષ્ટતાઓ તો તેનાં સ્ત્રી અને પુરુષ બંનેના ચહેરાની રીતો બહુ જ જુદા પ્રકારની છે તે છે; અને વળી તે સાથે તેની આંખો બહુ જ અજાયબીભરી હોય છે. પ્રાચીન તાડપત્રના સમય દરમ્યાન ચહેરાઓ હમેશાં બેમાંથી એક તરફ, બે તૃતીયાંશ અગર કાંઇક વધારેપડતા ચીતરેલા હોય છે. પછીના-કાગળના-સમય દરમ્યાન આગળની આંખ હમેશાં સંપૂર્ણ દોરવામાં આવતી કે જે પોર્ટ્રેટની ખાલી જગ્યા રોકતી. મિ. ઘોષ સમજાવે છે કે 'આ ફેરફાર ચિત્રકારની ઇચ્છા મુજબ થતો, કારણકે તે એમ બતાવવા માગતો કે પોતે આ કાંઇ સાદું ચિત્ર ચીતરતો નથી, પરંતુ તેનો ઇરાદો એક સાંપ્રદાયિક ચિત્ર તૈયાર કરવાનો છે.' આ દલીલ ગમે તેમ હોય, પણ તેના કરતાં મેં અત્રે રજુ કરેલી દલીલ વધારે યોગ્ય હોય તેમ મને લાગે છે. હાલમાં શ્વેતાંબર મંદિરોમાં મોટે ભાગે દરેક મૂર્તિ ઉપર, મૂર્તિના પથ્થરમાં કોતરેલાં મૂળ ચક્ષુઓ ઉપરાંત વધારાનાં સ્ફટિકનાં ચક્ષુઓનો (કે જેનો આકાર લંબગોળ જેવો અને બંને ખૂણાઓ અણીવાળા હોય છે તેનો) ઉપયોગ વધારે ભક્તિ—બહુમાનતા દેખાડવા માટે કરવામાં આવે છે. આ સ્ફટિકનાં ચક્ષુઓ મૂર્તિની મૂળ કુદરતી આંખો ઉપર અરધો ઇંચ અગર તેથી વધારે આગળ ઉપસી આવતાં દેખાય છે, અને જ્યારે મૂર્તિને એક બાજુ ઉપરથી જોવામાં આવે ત્યારે જૂનાં ચિત્રોમાં જેવી રીતની પોર્ટ્રેટની આંખો ચીતરવામાં આવેલી હોય છે તેને બરોબર મળતાં તે દેખાય છે. અત્યાર સુધી જાણમાં આવેલા આ કળાના નમૂનાઓ જૈન શ્વેતાંબર સંપ્રદાયની પ્રતોમાં ચીતરેલા દેખાય છે; અને તેમાં મુખ્યત્વે તીર્થંકરોનાં, દેવદેવીઓનાં ને પ્રખ્યાત ધર્મગુરુઓનાં જેવાં હોય છે તેવાં ચક્ષુ જ શ્વેતાંબર જૈન મંદિરોના સ્થાપત્યમાં છે. એટલે મારી માન્યતા મુજબ તો આ જૈનાશ્રિત કળામાં જે ઉપસેલાં ચક્ષુઓ દેખાય છે તેમાં તથા શરીરના બીજા અવયવો જેવાં કે નાક, કાન, આંખોની ભમરો વગેરે અંગોપાંગોમાં ચિત્રકારે શ્વેતાંબર જૈન મંદિરોના સ્થાપત્યનું જ અનુકરણ કરેલું હોય તેમ સ્પષ્ટ ભાસે છે. એક બાજુ તીર્થંકરો, દેવદેવીઓ, સાધુઓ અને દેરાસરની અંદરની બાજુમાં કોતરેલી નર્તકીઓની એ મૂર્તિઓ તથા બીજી બાજુ આપણાં અહીં રજુ કરવામાં આવેલાં ચિત્રો છે એ બંનેની વચ્ચે દેખાતી સરખામણી મારી આ દલીલને મજબૂત પુરાવો આપે છે.

જોકે પંદરમા સૈકાની વૈષ્ણવ સંપ્રદાયની હસ્તપ્રતોમાંના તેમજ એલોરાની ગુફામાંના કૈલાસના હિંદુ મંદિરનાં ભિત્તિચિત્રોના ચહેરાઓ પણ તે જ જાતની વિશેષતા દર્શાવે છે. વૈષ્ણવ સંપ્રદાયની હસ્તપ્રતોનાં ચિત્રોમાં આ જાતની જે વિશેષતા જોવામાં આવે છે તે બહુ મહત્ત્વની નથી,

કારણકે તે બધાં કાગળ ઉપર છે અને જૂનામાં જૂના તાડપત્રના નમૂના કરતાં યે કેટલાક સૈકા પછીનાં છે. એલોરાનાં ભિત્તિચિત્રોની તારીખ કદાચ દસમી અગર અગીઆરમી સદીની હશે. ગમે તેમ હોય, તોપણ તે આપણી દલીલને બરાબર બંધબેસતાં નથી. ચિત્રકારોએ તેમાં ફક્ત ચહેરાઓનાં ચક્ષુઓની સમાનતા સિવાય બીજી વિશેષતાઓ, જેની આપણે ઉપર ચર્ચા કરી ગયા, તેની રજુઆત તે ચિત્રોમાં કરી દેખાતી નથી. ચહેરાઓનાં ચક્ષુઓની આ રીત, જ્યાં સુધી મારી જાણમાં છે ત્યાં સુધી, અજંતા, બાઘ, સીતાન્નવાસલ અને એલોરાની જૈન (દિગંબર) ગુફાઓમાં પણ દેખાતી નથી; અને કાંચીવરમના સ્થાપત્યનિર્માણવાળા દિગંબર મંદિરમાં (કે જ્યાં એ જાતનાં ભિત્તિચિત્રો છે—એક જાતનાં શિખરની નીચેની છત ઉપર અને બીજાં દિવાલો ઉપર ત્યાં) પણ નથી. દિગંબર જૈનો મૂર્તિઓને વધારાનાં ચક્ષુઓથી શણગારતા નહિ હોવાથી તેમને દેવમંદિરની મૂર્તિઓની નકલ કરવાની હોય જ નહિ કે જેવી રીતે શ્વેતાંબરો શણગારે છે. આના માટે આપણે હજુ વળી આગળ વધીને કહી શકીએ કે શ્વેતાંબર ચિત્ર ચીતરનાર ચિત્રકારોએ જે પ્રમાણે મનુષ્યનો ચહેરો ચીતર્યો તેનું માત્ર અનુકરણ જ ગુજરાતના વૈષ્ણવ ચિત્ર ચીતરનાર ચિત્રકારોએ કર્યું, નહિ કે મિ. ઘોષ કહે છે તેમ પોતાની સ્વાભાવિક ઇચ્છાથી. જૈન મંદિરોમાં આવેલી મધ્યકાળની જિનમૂર્તિઓ ઉપરથી જ તે રીતને તેઓ અનુસર્યા હોય એ જ વધારે યુક્તિસંગત લાગે છે. એ ઉપરાંત જ્યાંજ્યાં નાનાં છબિચિત્રોના ચહેરાઓ બીજા એવાં ચક્ષુઓવાળા હોય છે તે સઘળા શ્વેતાંબર જિનમૂર્તિના અનુકરણ રૂપે હોય તેમ માલૂમ પડે છે. ટૂંકાણમાં, આ પ્રથાનું મૂળ શ્વેતાંબર મંદિરોના સ્થાપત્યમાં સમાએલું છે. આ ઉપસેલાં ચક્ષુઓની પ્રથા શ્વેતાંબર મંદિરોમાં ક્યારથી શરૂ થઇ તે શોધી કાઢવું મુશ્કેલ છે; તોપણ તે સંબંધમાં મેં મારી જાતે અમદાવાદમાં મળેલા જૈન સાધુ સંમેલન વખતે એ વયોવૃદ્ધ તથા જ્ઞાનવૃદ્ધ જૈનાચાર્યોની મુલાકાત લીધી હતી અને તેઓશ્રી તરફથી મને જે ખુલાસો મળ્યો હતો તે અક્ષરશઃ નીચે પ્રમાણે છેઃ

'એવાં ચક્ષુઓની પ્રથા ક્યારથી શરૂ થઇ તે નિશ્ચિતપણે કહી શકાય નહિ, પરંતુ આ પ્રથા ઘણી પ્રાચીન હોવાનું જૂની જિનમૂર્તિઓ તથા ચિત્રો ઉપરથી અનુમાન થઇ શકે છે. સૌથી પ્રથમ ચક્ષુઓ કોડીનાં વપરાતાં હતાં. તે પછી હાલમાં મેવાડ, મારવાડ આદિ પ્રદેશોમાં વપરાય છે તેવાં મીનાકારી (ચાંદીનાં પતરાં ઉપર રંગકામ કરેલાં) ચક્ષુઓએ કોડીનું સ્થાન લીધું. સમય જતાં મીનાકારી ચક્ષુઓની સુલભતા સઘળા સ્થળે નહિ હોવાથી તેનું સ્થાન સ્ફટિકના ચક્ષુઓએ લીધું હોય એમ લાગે છે. મૂર્તિ ઉપર સ્ફટિક સીધો ટકી શકે નહિ, તેથી તેને પકડી રાખવા માટે ચાંદીના પતરાનાં ખોખાં તૈયાર કરી તેને સોનાથી રસાવી તેની અંદર સ્ફટિકના ચક્ષુઓ મૂકવામાં આવે છે. આથી તેનું કદ સ્થૂલ થઈ જઈ ચક્ષુઓ ઉપસેલાં (ઉપનેત્રો જેવાં) દેખાય છે. આજે કેટલેક ઠેકાણે તો મૂર્તિઓ પર આ ચક્ષુઓ ચોંટાડવામાં બહુ બેદરકારી બતાવવામાં આવે છે, તેથી જેમ બને તેમ ચક્ષુઓ દર્શન કરનારને વધારે આહ્લાદકારી અને આત્મરમણતા તરફ વધુ ને વધુ ખેંચવાને સહાયકારી થાય તે માટે જિનમૂર્તિને તે બરાબર બંધબેસતાં રહે તેવું ધ્યાન દેવાની આવશ્યકતા છે.'

વળી આ ચિત્રો મધ્યેની પુરુષ તથા સ્ત્રીની આકૃતિઓના કપાળમાં ● આવા આકારનું, પુરુષોના કપાળમાં U આવા આકારનું અને કેટલાક દાખલાઓમાં ≡ ત્રણ લીટીઓ સહિતનું તિલક જોવામાં આવે છે. સ્ત્રીના કપાળમાં ● આવા પ્રકારનું જે તિલક જોવામાં આવે છે તે પ્રજામાં આજે પણ જેમનું તેમ ચાલુ છે; પરંતુ પુરુષોના કપાળમાં U આવા પ્રકારનું જે તિલક જૂનાં ચિત્રોમાં જોવામાં આવે છે તે પ્રથા તે સમયના રીતરિવાજોનું સમર્થન ભલે કરતી હોય, પરંતુ આજે તે જૈનોમાંથી નાબૂદ થએલી હોવા છતાં પણ તેનું અનુકરણ વૈષ્ણવ સંપ્રદાયમાં જેમનું તેમ કાયમ રહ્યું છે. પ્રાચીન જૈન વિષયો સંબંધીનાં ચિત્રોમાં તેમજ અમદાવાદમાં નાગજી ભૂદરની પોળના દેરાસરના ભૂમિગૃહમાં આવેલી વિ.સં. ૧૧૦૨ (ઇ.સ. ૧૦૪૫)ની ધાતુની જિનમૂર્તિના તથા

પંદરમા સૈકાના ધાતુના એ પંચતીર્થના પટોમાંની જિનમૂર્તિના કપાળમાં પણ આવા U પ્રકારનું તિલક મળી આવતું હોવાથી આપણે સહેજે અનુમાન કરી શકીએ કે પંદરમી સોળમી સદી સુધી તો ગુજરાતનાં પુરુષપાત્રો, પછી તે જૈન હો કે વૈષ્ણવ, પોતાના કપાળમાં આવા U પ્રકારનું તિલક કરતાં હોવાં જોઈએ. તે પ્રથા ક્યારે નાબૂદ થઈ તેનું ખરેખરૂં મૂળ શોધી કાઢવું મુશ્કેલ છે, પરંતુ એટલું તો ચોક્કસ છે કે મિ. મહેતા કહે છે તેમ, પ્રાચીન ચિત્રોમાં મળી આવતાં આવા U પ્રકારનાં તિલકો કોઈ સંપ્રદાયનાં દ્યોતક નહોતાં. તીર્થંકરોનાં ચિત્રોમાં બંને પ્રકારનાં તિલકો મળી આવે છે. સાધુ અગર સાધ્વીના કપાળમાં કોઈ પણ જાતનું તિલક જોવામાં આવતું નથી. સાધુઓ અને સાધ્વીઓનાં કપડાં પહેરવાની રીત તદ્દન જુદી જ દેખાઈ આવે છે, કારણકે સાધુઓનો એક ખભો અને માથાનો ભાગ તદ્દન ખુલ્લો – વસ્ત્ર વગરનો હોય છે; જ્યારે સાધ્વીઓનો પણ માથાનો ભાગ ખુલ્લો હોવા છતાં તેઓનું ગરદનની પાછળ અને આખું શરીર કાયમ કપડાંથી આચ્છાદિત થએલું હોય છે. પ્રાચીન ચિત્રોમાં રાજમાન્ય વિદ્વાન સાધુઓ સુવર્ણ સિંહાસન ઉપર બેઠેલા દેખાય છે, તે એ સમયની પ્રથાની રજુઆત ચિત્રકારે ચિત્રમાં કરી બતાવ્યાની સાબિતી છે.[૧]

મોગલ સમય પહેલાંના એક પણ જૂના ચિત્રમાં સ્ત્રીઓના માથા ઉપર ઓઢણું અગર સાડી ઓઢેલી જણાતી નથી. સ્ત્રીઓ ચોળી પહેરે છે, પણ તેઓના માથાનો ભાગ તદ્દન ખુલ્લો હોય છે. આ ઉપરથી ગુજરાતમાં સ્ત્રીઓએ માથે ઓઢવાનો ચાલ મોગલ રાજ્ય પછીથી શરૂ થએલો હોય એમ લાગે છે. મોગલ સમય પહેલાંના દરેક ચિત્રમાં સ્ત્રીઓની માફક પુરુષોને પણ લાંબા વાળ હોય છે અને તેઓએ અંબોડા વાળેલા જૂનાં ચિત્રોમાં દેખાઈ આવે છે. વળી પુરુષો દાઢી રાખતા અને કાનમાં આભૂષણો પણ પહેરતા.[૨] સ્ત્રીઓએ માથે ઓઢવાનો અને પુરુષોએ ચોટલા તથા દાઢી કાઢી નખાવવાનો રિવાજ મોગલ રાજ્ય અમલ પછીથી જ ગુજરાતમાં પડેલો હોય એમ લાગે છે.

૧ 'એક દિવસ પ્રાતઃકાળને વિષે કુમારપાળ ૭૨ સામંતો, ૩૬ રાજકુળો અને બીજા અનેક કવિ, વ્યાસ, પુરોહિત, રાજગુરુ, મંત્રી વગેરે પરિજન સહિત રાજસભામાં સુવર્ણના પુરુષપ્રમાણ આસન ઉપર બેઠેલો હતો, તેવામાં તેણે કાંચનમય આસન ઉપર બેઠેલા હેમચંદ્રાચાર્યને કહ્યું. . . .'—કુમારપાલ પ્રબંધ ભાષાંતર, પૃષ્ઠ ૧૦૯.

૨ 'આ પુરુષને માથું તો છે નહિ અને આ બારીઓ એનાં કેશાદિ લક્ષણ કહે છે એ મોટું આશ્ચર્ય છે, એમ વિચારી કુમારપાળે તેમને પૂછ્યું, એટલે તેમણે તેમને કહ્યું કે હે નરોત્તમ સાંભળો . . . પૃષ્ઠે ઘસારો છે તેથી વેણીનું અનુમાન થાય છે, સ્કંધે ઘસારા છે તેથી કર્ણાભરણની લક્ષ્મી પ્રકટ થાય છે, છાતી બધી ગૌર છે, તે ઉપરથી લાંબી દાઢી હશે એમ જણાય છે.'
—ચારિત્રસુંદરગણિકૃત કુમારપાળ ચરિત્ર ભાષાંતર પા. ૪૧ (પંદરમી સદી)

જૈન ચિત્ર-કલ્પલતા

ચિત્ર ૧ દેવી સરસ્વતી—સરસ્વતી દેવીનું આ ચિત્ર ખંભાતના શાંતિનાથના ભંડારની પ્રત મધ્યેનું છે,

ચિત્ર ૧ : દેવી સરસ્વતી (વિ. સં. ૧૧૮૪)

અને પ્રો. બ્રાઉનના લખેલા 'કાલકકથા' નામના અંગ્રેજી પુસ્તકમાંથી તેઓની પરવાનગીથી લેવામાં આવ્યું છે.

સરસ્વતીના આ ચિત્રનું વર્ણન આપતાં પ્રો. બ્રાઉન આમ જણાવે છેઃ દેવી સરસ્વતી (અગર ચક્રેશ્વરી?) પહેલાં મારા તરફથી 'ઇન્ડિયન આર્ટ ઍન્ડ લેટર્સ વૉ. ૩ (ઇ.સ.૧૯૨૯)ના પાના ૧૬ પર પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવેલું ચિત્ર નંબર ૧ જે પ્રતમાંથી લેવામાં આવેલું છે તે જ પ્રતમાંથી.[૧]

આ ચિત્ર ચાર હાથવાળી દેવીનું છે. તેના ઉપરના બંને હાથમાં કમળનાં ફૂલ છે તથા નીચેના બંને હાથમાં અનુક્રમે અક્ષસૂત્ર (જપમાળા) અને પુસ્તક છે. દેવીની આગળ ડાબી બાજુએ હંસ પક્ષી ચીતરેલું છે. દેવીની જમણી બાજુએ देसल० અને ડાબી બાજુએ शुभंकर નામના બે પુરુષો બે હસ્તની અંજલિ જોડીને સ્તુતિ કરતા દેખાય છે.

મિ. બ્રાઉન આ ચિત્ર સરસ્વતી (અગર ચક્રેશ્વરી?)નું હોવાની શંકા ઉઠાવે છે, પરંતુ હંસ પક્ષીની રજુઆત આપણને સાબિતી આપે છે કે એ સરસ્વતીનું જ ચિત્ર છે. વળી આ ચિત્રમાં જે વસ્તુઓની રજુઆત તેના હાથમાં જોવામાં આવે છે તે પ્રમાણેનું જ વર્ણન मलयकीर्ति નામના એક વિદ્વાન જૈન સાધુએ રચેલા श्रीशारदास्तोत्रમાં છે.[૨]

નંબર ૧ના આ ચિત્રની એકએક આકૃતિ જાણે એક જ ઝટકે આલેખવામાં આવી હોય એમ લાગે છે, છતાં તેની પાછળ સ્વરૂપનું સંપૂર્ણ ભાન પ્રત્યક્ષ થાય છે, એ, કલાકારનું પીંછી ઉપરનું અદ્ભુત પ્રભુત્વ અને છટા બતાવી આપે છે. વૃત્તાંતની વિગત જરા પણ ચૂક્યા વિના

---

૧ The Goddess Sarasvati (or Chakresvari?) From the same MS. as Figure 1. Previously published by me in Indian Art and Letters Vol III. pp. 16 ff., 1929.

—The story of Kalak. p. 116.

૨ वरददक्षिणबाहुधृताक्षका, विशदवामकरार्पितपुस्तिका ।
उभयपाणिपयोजधृताम्बुजा, दिशतु मेऽभितानि सरस्वती ॥४॥ भ० पा० का० सं० भाग २ पृष्ठ १९८

ભાવાર્થ—વરદાન દેનારી મુદ્રાવાળી તેમજ જપમાળાને ધારણ કરેલા દક્ષિણ હસ્તવાળી; વળી નિર્મળ ડાબા હાથમાં પુસ્તક રાખ્યું છે એવી તેમજ બંને કરકમળ વડે કમળને ધારણ કર્યું છે એવી સરસ્વતી મને મનોવાંછિત અર્પો.

આલેખાએલાં, સુશોભન અને સુરચનાના નમૂનારૂપ આ ચિત્ર છે. તેમાં યે સરસ્વતીની ઊભી મૂર્તિનું દેહસૌષ્ઠવ અને અંગોભંગ અલૌકિક પ્રકારનાં છે.

ચિત્ર ૨ શ્રીહેમચંદ્રસૂરિ, શિષ્ય અને પરમાર્હત કુમારપાળ—ખંભાતના શાંતિનાથ ભંડારની દશવૈકાલિક લઘુવૃત્તિની સં. ૧૨૦૦ (સ. ૧૧૪૩)માં લખાએલી તાડપત્રની હસ્તલિખિત પ્રતના છેલ્લા પાના ઉપરથી આ ચિત્ર લેવામાં આવેલું છે.[૩] ચિત્રમાં ડાબી બાજુએ સિંહાસન ઉપર બેઠેલા આચાર્ય શ્રીહેમચંદ્રસૂરિ, જમણા હાથમાં તાડપત્ર રાખીને, સામે બેઠેલા પોતાના શિષ્ય શ્રીમહેંદ્રસૂરિને પાઠ આપતા હોય તેમ લાગે છે, કારણકે આ પ્રત તેઓશ્રીના પઠન નિમિત્તે લખાવવામાં આવી હોવાનો ઉલ્લેખ છે. મહેંદ્રસૂરિની પાછળ બે હાથ જોડીને ઊભેલી જે ગૃહસ્થની આકૃતિ ચીતરેલી દેખાય છે તે ઘણું કરીને ગૂર્જરેશ્વર કુમારપાલની હોય તેમ લાગે છે. શ્રીહેમચંદ્રસૂરિની આગળ સ્થાપનાચાર્ય છે તથા મસ્તક ઉપરની છતમાં ચંદરવો ચીતરેલો જણાય છે.

ચિત્ર ૨ : શ્રીહેમચંદ્રસૂરિ, શિષ્ય અને પરમાર્હત કુમારપાળ (વિ. સં. ૧૨૦૦)

ચિત્ર ૩ ચિત્ર નં. ૨નો મોટો ભાગ ઘસાઇ ગએલો હોવાથી ગુજરાતના સુપ્રસિદ્ધ કલાકાર શ્રી રવિશંકર રાવળ પાસે તેના આદ્ય સ્વરૂપની રેખાવલિઓ પૂર્ણ કરાવીને અત્રે રજુ કરી છે.

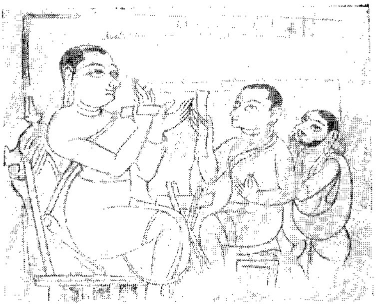

ચિત્ર ૩ : બાજુના અસ્પષ્ટ ચિત્ર ઉપરથી, તેનું આદ્ય સ્વરૂપ કલ્પીને કરેલું રેખાલેખન

ચિત્ર ૪ અપ્રતિચક્રા (ચક્રેશ્વરી)–વિદ્યાદેવી ૫; મંત્ર: ॐ ह्रीं अप्रतिचक्रायै ॐ नमः। ; નિરંતર હાથમાં ચક્ર હોવાથી ચક્રેશ્વરી; પ્રતનું પાનું ૮૩; ચિત્રનું કદ ૧¾×૨⅛ ઈંચ; પૃષ્ઠભૂમિ વાદળી; ચાર હાથ; ચારે હાથમાં ચક્ર; શરીરનો વર્ણ તપાવેલા સુવર્ણ જેવો; મુકુટનો વર્ણ સુવર્ણ; કંચુકી લીલા રંગની; ઉત્તરીય વસ્ત્ર કાળા રંગના પટાવાળું સફેદ; ગરુડના વાહન ઉપર ભદ્રાસને બેઠક; ચક્રેશ્વરીની મોટી માનુષી કદની મૂર્તિ શત્રુંજય પર્વત ઉપર છે.

૩ તેની પ્રશસ્તિ નીચે પ્રમાણે છે:—

॥ मंगलं महाश्री ॥ संवत १२/१०० (१२००) वर्षे श्रावण सुदी ५ गुरु दिने अणहि [लपुरपत्तनं समस्त] राजावली पूर्वपूज्य परमो [त्कृष्ट] . . . ' चारित्रचूडामणि सरस्वती विद्याभिधान . . . . . [श्रा]वक प्रतिबोधक रस . . . . बोध निर्गासन सूर्यमिव उद्योतकर . . . . [म]हेंद्रसूरिभिः शिष्य [पठनार्थ] . . . [श्रीहेम] चंद्रेण महत्तर हेतो दशवैकालिक लघुवृत्ति लिखापितमिति ॥ लेखक पाठकयोः ॥ शुभं भवतु [शिव]मस्तु ॥छ॥ ॥छ॥

ચિત્ર ૪ : અપ્રતિચક્રા (ચક્રેશ્વરી)-વિદ્યાદેવી ૫ (વિ. સં. ૧૨૧૮) ચિત્ર ૫ : પુરુષદત્તા (નરદત્તા)-વિદ્યાદેવી ૬

ચિત્ર ૬ : બ્રહ્મશાંતિ યક્ષ (વિ. સં. ૧૨૧૮) ચિત્ર ૭ : અંબાઇ (અંબિકા)

ચિત્ર ૫ પુરુષદત્તા (નરદત્તા)–વિદ્યાદેવી ૬; મંત્રઃ ૐ પાં પુરુષદત્તાયૈ ૐ નમઃ । ; મનુષ્યને વરદાન વગેરે મનચ્છિત વસ્તુ આપનાર હોવાથી પુરુષદત્તા; પ્રતના પાના ૮૩ ઉપરથી; ચિત્રનું કદ ૧$\frac{૭}{૮}$×૨$\frac{૩}{૮}$ ઇંચ; પૃષ્ઠભૂમિ સીંદુરિયા રાતા રંગની; ચાર હાથ; ઉપરના જમણા હાથમાં તલવાર અને ડાબા હાથમાં ખેટક (ઢાલ), તથા નીચેનો જમણો હાથ વરદ મુદ્રાએ અને ડાબા હાથમાં માતુલિંગ (બિજોરા)નું ફળ; શરીરનો તથા મુકુટનો રંગ સુવર્ણ; કંચુકીનો રંગ લીલો; ઉત્તરીય વસ્ત્ર ધોળાં ટપકાંની ભાતવાળું લાલ રંગનું; મહિષી (ભેંસ)ના વાહન ઉપર ભદ્રાસને બેઠક.

ચિત્ર ૬ બ્રહ્મશાંતિ યક્ષ—પ્રતનું પાનું ૨૨૭; ચિત્રનું કદ ૨$\frac{૧}{૮}$×૨$\frac{૩}{૮}$ ઇંચ; પૃષ્ઠભૂમિ સીંદુરિયા રાતા રંગની; દેખાવથી વિકરાલ; ચાર હાથ; ઉપરના જમણા હાથમાં છત્ર તથા ડાબા હાથમાં દંડ, અને નીચેના જમણા હાથમાં પુસ્તક તથા ડાબો હાથ વરદ મુદ્રાએ; શરીરનો વર્ણ પીળો; હંસના વાહન ઉપર ભદ્રાસને બેઠક; મુકુટમંડિત જટા. બ્રહ્મશાંતિ યક્ષની માન્યતા ઘણી જ પ્રાચીન છે. એક માન્યતા એવી છે કે મહાવીરને વર્ધમાનપુર (હાલના વઢવાણ)ની પાસે યક્ષના મંદિરમાં જે શૂલ-પાણિ યક્ષે મિથ્યાદૃષ્ટિ અવસ્થામાં ઉપસર્ગ કર્યો હતો, તે જ શૂલપાણિ યક્ષ પછીથી સમકિત પામ્યો અને તે જ બ્રહ્મશાંતિ યક્ષ તરીકે ઓળખાવા લાગ્યો.

ચિત્ર ૭ અંબાઇ (અંબિકા)—પ્રતના પાના ૨૨૭ ઉપરથી. વિ. સં. ૧૨૪૧ (ઇ. સ. ૧૧૮૪)માં પ્રાચીન ગુજરાતી ભાષામાં ભરતેશ્વર બાહુબલિ રાસની રચના કરનાર શ્રીશાલિભદ્રસૂરિએ રચેલા બુદ્ધિરાસની શરૂઆતના મંગલાચરણમાં અંબિકાનો અંબાઇ નામથી જ ઉલ્લેખ કર્યો છે, જે નીચે પ્રમાણે છે.[૪]

'પણમવિ દેવિ અંબાઇ, પંચાણણ ગામિણિ વરદાઇ,
જિણ સાસણિ સાંનિધિ કરઇ સમિણિ
સુર સામિણિ તું સદા સોહાગિણિ.'

અંબા એટલે માતા–જનની. જેવી રીતે માતા પોતાના સંતાન ઉપર વાત્સલ્યભાવને ધરનારી હોય છે તેમ અંબિકા પણ ભક્તજનોનું વાત્સલ્ય કરવાવાળી હોવાથી તેનું અંબાઇ–અંબિકા નામ સાર્થક છે. આ ચિત્ર ચીતરનાર ચિત્રકારે તેના જમણા હાથમાં પુત્ર રાખીને તેના તરફ વાત્સલ્યભર્યાં નયનોએ નિહાળી રહેલી ચીતરીને અને તેના ડાબા હાથમાં પરમ મંગલરૂપ આમ્રલુંબી આપીને તેના નામની સાર્થકતા સિદ્ધ કરી બતાવી છે. અંબિકાદેવીના પૂર્વભવ વગેરેનું વર્ણન શ્રીજિન-પ્રભસૂરિએ 'વિવિધતીર્થકલ્પ' નામના ગ્રંથમાં 'અંબિકાદેવી કલ્પ'માં કરેલું છે.[૫] અંબિકા દેવીની પણ ભિન્નભિન્ન પ્રકારની સુંદર મૂર્તિઓ, સુંદર ચિત્રો તથા ભિન્નભિન્ન પ્રકારના સ્તોત્રો, મંત્રો, યંત્રો વગેરે મળી આવે છે, પરંતુ વિસ્તારભયથી તે અત્રે નહિ આપતાં મારા તરફથી અન્યત્ર પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવેલ છે.[૬]

ચિત્ર ૮ સરસ્વતી—પ્રતના પાના ૧ ઉપરથી; ચિત્રનું કદ ૨×૨$\frac{૩}{૮}$ ઇંચ; પૃષ્ઠભૂમિ ઘેરા રાતા રંગની; ચાર હાથ; ઉપરના જમણા હાથમાં કમળ, તથા ઉપરના ડાબા અને નીચેના જમણા હાથમાં વીણા; નીચેના ડાબા હાથમાં પુસ્તક; કમળના આસન ઉપર ભદ્રાસને બેઠક; વાહન હંસનું; શરીરનો વર્ણ ગૌર (સફેદ); કંચુકી લાલ; મુકુટનો રંગ લાલ રંગની ભાતવાળો પીળો. સરસ્વતી વિષે

૪ જૈ૦ ગૂ૦ ક૦ ભા. ૧. પૃષ્ઠ ૨.

૫ 'અમ્બિકાદેવી કલ્પ' નામનો આખો કલ્પ મૂળ પ્રાકૃત તથા ગુજરાતી ભાષાંતર સાથે બપ્પભટ્ટસૂરિકૃત 'ચતુર્વિંશતિકા' નામના ગ્રંથના પાના ૧૪૫ થી ૧૪૯ ઉપર આપેલો છે.

૬ જુઓ 'श्रीभैरवपद्मावती कल्प' નામનો જૈન મંત્રશાસ્ત્રનો ગ્રંથ.

ચિત્ર ૮ : સરસ્વતી (વિં. સં. ૧૨૧૮)

જુદાજુદા પ્રકારની સુંદર મૂર્તિઓ, જૈન મંદિરોમાં અને તાડપત્રની તેમજ કાગળની હસ્તલિખિત પ્રતોમાં જુદાજુદા પ્રકારનાં ચિત્રો, તથા જૈનસાહિત્યમાં જુદાજુદા પ્રકારનાં ભિન્નભિન્ન સ્વરૂપોની કલ્પનાઓ જેટલી વિસ્તૃત સ્વરૂપમાં મળી આવે છે તેટલી ભારતના બીજા કોઇ સંપ્રદાયમાં મળી આવતી નથી. સરસ્વતીની મૂર્તિઓ, ચિત્રો તથા સ્વરૂપોને લગતો એક જુદોજ વિસ્તૃત નિબંધ મેં તૈયાર કર્યો છે જે 'જૈન સત્યપ્રકાશ' માસિકમાં છપાએલ છે, એટલે આ પ્રસંગ અત્રે જ સમાપ્ત કરૂં છું. સરસ્વતીની સૌથી પ્રાચીન મૂર્તિ મથુરાના કંકાલીટીલામાંથી મળી આવી છે.[૭]

ચિત્ર ૯ 'પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું ચ્યવન'—પુષ્પોત્તર વિમાનમાંથી વીસ સાગરોપમનું આયુષ્ય પૂર્ણ કરી ચ્યવ્યા–ચ્યવીને શ્રીમહાવીર ભગવાન બ્રાહ્મણકુંડગ્રામ નામના નગરમાં કોડાલગોત્રી ઋષભદત્ત

---

૭ 'The right hand figure represents a headless statue of Sarasvati, the goddess of speech and learning, found in 1889 near the first or eastern temple in the mound, which seems to have belonged to the Swetamber sect.

The goddess is shown sitting squatted, with her knees up, on a rectangular pedestal, holding a manuscript in her left hand. The right hand, which was raised, has been lost. The figure is clothed in very stiffly executed drapery, a small attendant with hair dressed in rolls stands on each side. The attendant on the left wears a tunic and holds a jar – the attendant on the right has his hands clasped in adoration.'

—'Statues of Sarasvati and a female' plate. 99 page 56 in 'The Jain Stupa and other Antiquities of Mathura.' 1901, by V. A. Smith I. C. S.

બ્રાહ્મણની સ્ત્રી દેવાનંદા જે જાલંધરગોત્રી છે, તેની કુક્ષિમાં ગર્ભરૂપે ઉત્પન્ન થયા. આષાઢ સુદિ ૬ ના દિવસની મધ્યરાત્રિના સમયે અને ઉત્તરાફાલ્ગુની નક્ષત્રને ચંદ્રનો યોગ થયો હતો તે વખતે પ્રભુ દિવ્ય આહાર, દિવ્ય ભવ અને દિવ્ય શરીરનો ત્યાગ કરી ગર્ભમાં આવ્યા.

ચિત્રમાં પદ્માસન ઉપર પ્રભુ મહાવીરની મૂર્તિ બિરાજમાન કરેલી છે. આજે જેવી રીતે જિનમંદિરમાં મૂર્તિને આભૂષણોથી શણગારવામાં આવે છે તેવી જ રીતે ચિત્રમાં પણ મૂર્તિને માથે મુકુટ, બે કાનમાં કુંડલ, ગરદનમાં કંઠો, હૃદય ઉપર મોતીનો અગર હીરાનો હાર, બંને હાથની કોણીના ઉપરના ભાગમાં બાજુબંધ અને બંને કાંડાં ઉપર બે કડાં છે; હાથની હથેળીઓ પલાંઠી ઉપર મૂકીને ભેગી કરી છે અને તેના ઉપર સોનાનું શ્રીફળ વગેરે ચીતરવામાં આવ્યું છે; મૂર્તિ પદ્માસને બિરાજમાન છે; મૂર્તિની આજુબાજુ પરિકર છે.

અહીં એક પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થઈ શકે છે કે જ્યારે તીર્થંકરનું ચ્યવન થાય છે ત્યારે શરીરની કોઈપણ જાતની આકૃતિ તો હોતી નથી અને તીર્થંકર નામ કર્મનો ઉદય તો તેઓએ શ્રમણપણું અંગીકાર કર્યા પછી કૈવલ્યજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થયા પછી સત્તામાં આવે છે, તો તેઓના ચ્યવનનો પ્રસંગ દર્શાવવા તેઓની મૂર્તિ મૂકવાનું કારણ શું?

જૈન સંપ્રદાયના અનુયાયીઓ દરેક તીર્થંકરનાં પાંચે કલ્યાણકો એક સરખા જ મહત્ત્વનાં માને છે. પછી તે ચ્યવન, જન્મ, દીક્ષા, કૈવલ્ય કે નિર્વાણ હોય; અને તે સઘળાં યે સરખા જ પવિત્ર હોવાથી ગુજરાતના પ્રાચીન ચિત્રકારોએ પાંચે કલ્યાણકો દર્શાવવા માટે જુદીજુદી કલ્પનાઓ કરી અમુક પ્રકારની આકૃતિઓ નક્કી કરેલી હોય એમ લાગે છે; કારણકે જેવી રીતે આપણને અહીં ચ્યવન કલ્યાણકના ચિત્રપ્રસંગમાં પ્રશ્ન ઉદ્ભવે છે તેવી જ રીતે નિર્વાણ કલ્યાણકના ચિત્રપ્રસંગમાં પણ ઉદ્ભવવાનો જ, કેમકે પ્રભુ નિર્વાણ પામ્યા પછી તેઓને શરીર કે આકૃતિ વગેરે કાંઇ હોતું નથી. હવે આપણે પાંચે કલ્યાણકોમાં પ્રાચીન ચિત્રકારોએ કઇકઇ કલ્પનાકૃતિઓ નક્કી કરેલી છે તે સંબંધી વિચાર કરી લઇએ એટલે આગળના આ પાંચે પ્રસંગોને લગતાં ચિત્રોમાં શંકા ઉદ્ભવવાનું કારણ ઉપસ્થિત થાય જ નહિ.

૧ ચ્યવન કલ્યાણક—આ પ્રસંગ દર્શાવવા માટે પ્રાચીન ચિત્રકારો હમેશાં જે જે તીર્થંકરના ચ્યવન કલ્યાણકનો પ્રસંગ હોય તેના લંછન સહિત અને કેટલાંક ચિત્રોમાં તો તેઓના શરીરના વર્ણ સહિત તે તે તીર્થંકરની મૂર્તિની પરિકર સહિત રજુઆત કરે છે. (જુઓ ચિત્ર ૯).

૨ જન્મ કલ્યાણક—આ પ્રસંગ માટે જે જે તીર્થંકરના જન્મ કલ્યાણકનો પ્રસંગ દર્શાવવાનો હોય તે તે તીર્થંકરની માતા અને એક નાના બાળકની રજુઆત કરે છે. (જુઓ ચિત્ર ૧૧).

૩ દીક્ષા કલ્યાણક—જે જે તીર્થંકરના દીક્ષા કલ્યાણકનો પ્રસંગ દર્શાવવાનો હોય તે તે તીર્થંકરોની, ઝાડ નીચે બેસી એક હાથથી ચોટલીનો પંચમુષ્ટિ લોચ કરતી આકૃતિની અને પાસે બે હાથ પહોળા કરીને કેશને ગ્રહણ કરતા ઇન્દ્રની રજુઆત ચિત્રમાં તેઓ કરે છે. (જુઓ ચિત્ર ૨૮).

૪ કૈવલ્ય કલ્યાણક—જે જે તીર્થંકરના કૈવલ્ય કલ્યાણકનો પ્રસંગ દર્શાવવાનો તેનો આશય હોય તે તે તીર્થંકરના સમવસરણની રજુઆત તેઓ કરે છે. (જુઓ ચિત્ર ૧૩).

૫ નિર્વાણ કલ્યાણક—જે જે તીર્થંકરના નિર્વાણ કલ્યાણકનો પ્રસંગ દર્શાવવાનો હોય તે તે તીર્થંકરના શરીરના વર્ણ તથા લંછન સાથે તેઓની પદ્માસનની બેઠકે વાળેલી પલાંઠી નીચે સિદ્ધશીલાની (બીજના ચંદ્રમાના આકાર જેવી) આકૃતિની તથા બંને બાજુમાં એકેક ઝાડની રજુઆત પ્રાચીન ચિત્રકારો કરતા દેખાય છે. (જુઓ ચિત્ર ૧૨).
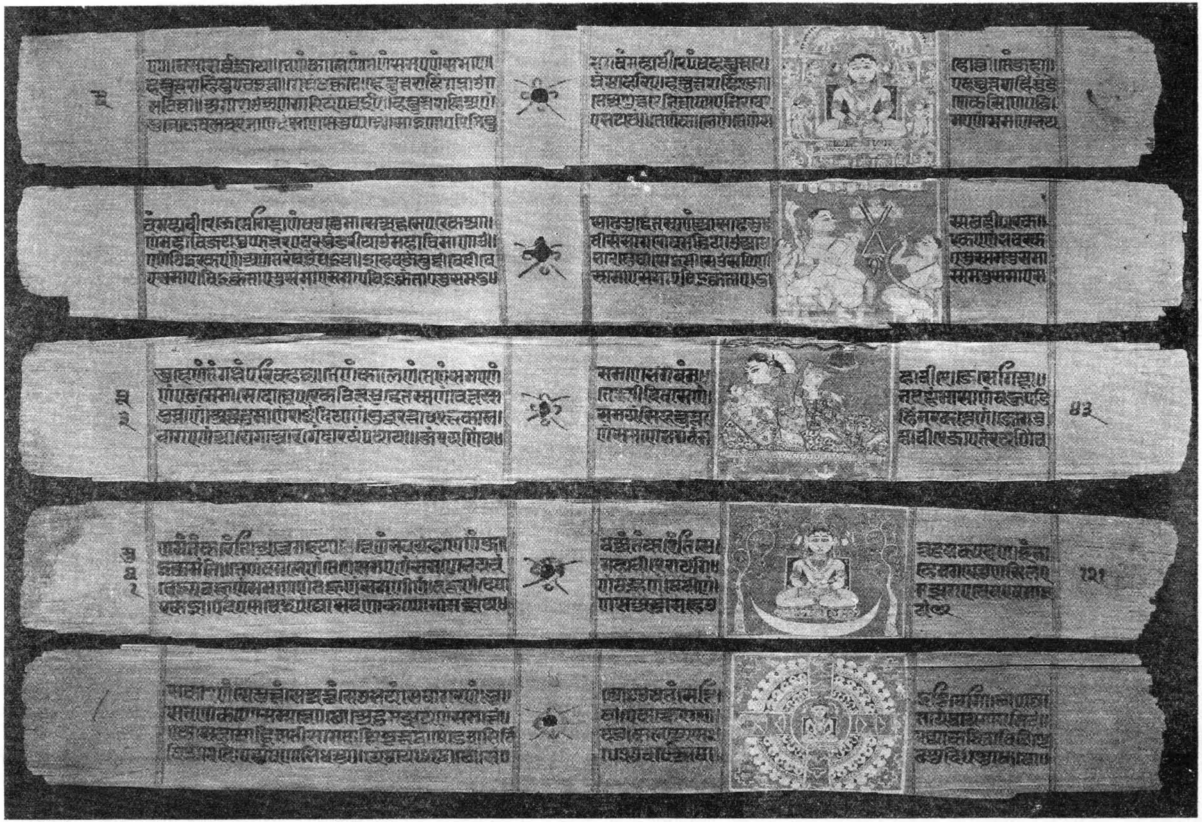
ચિત્ર ૯થી ૧૩ : ઉપરથી અનુક્રમે: પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું ચ્યવન, ગુરુમહારાજ શિષ્યને પાઠ આપે છે, પ્રભુ શ્રીમહાવીરનો જન્મ, પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું નિર્વાણ, પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું સમવસરણ. (વિ. સં. ૧૪૨૭)

ચિત્ર ૧૦ ગુરુ મહારાજ શિષ્યને પાઠ આપે છે—ઉ૦ ફો૦ ધ૦ ભંડારની પ્રતમાંથી. આ પ્રતમાં ચિત્રકારનો આશય મહાવીરનાં પાંચે કલ્યાણક દર્શાવવાનો છે. તેમાં બાકીના ચ્યવન, જન્મ, કૈવલ્ય અને નિર્વાણ કલ્યાણકના પ્રસંગો તો તેણે પ્રાચીન ચિત્રકારોની રીતિને અનુસરતાં જ દોરેલા છે, પરંતુ દીક્ષા કલ્યાણકના પ્રસંગમાં પંચમુષ્ટિલોચના પ્રસંગને બદલે આ ચિત્રમાં જૈન સાધુઓનું દીક્ષિત અવસ્થાનું ચિત્ર દોરેલું છે.

ચિત્રની અંદર મધ્યમાં છતમાં બાંધેલા ચંદરવાની નીચે ભદ્રાસન ઉપર બેઠેલી આકૃતિ આચાર્ય મહારાજની છે. ઘણું કરીને તે આ પ્રત લખાવવાનો ઉપદેશ આપનાર આચાર્ય મહારાજની હશે. તેઓનો જમણી બાજુનો એક ખભો ઉઘાડો છે. જમણા હાથમાં મુહપત્તિ રાખીને તથા ડાબો હાથ વરદ મુદ્રાએ રાખીને, સામે હાથમાં તાડપત્રનું પાનું પકડીને બેઠેલા શિષ્ય-સાધુને કાંઇ સમજાવતા હોય એમ લાગે છે. ગુરુ અને શિષ્ય બંનેની વચમાં સહેજ ઉપરના ભાગમાં સ્થાપનાચાર્યની રજુઆત ચિત્રકારે કરેલી છે. ભદ્રાસનની પાછળ એક શિષ્ય કપડાના ટુકડાથી ગુરુની શુશ્રૂષા કરતો દેખાય છે.

ચિત્ર ૧૧ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનો જન્મ—ઉપરોક્ત પ્રતમાંથી.

જે વખતે ગ્રહો ઉચ્ચ સ્થાનમાં વર્તતા હતા, ચંદ્રનો ઉત્તમ યોગ પ્રાપ્ત થયો હતો, સર્વત્ર સૌમ્યભાવ શાંતિ અને પ્રકાશ ખીલી રહ્યાં હતાં, દિશાઓમાં અંધકારનું નામનિશાન પણ ન હતું, ઉલ્કાપાત, રજોવૃષ્ટિ, ધરતીકંપ કે દિગ્દાહ જેવા ઉપદ્રવોનો છેક અભાવ વર્તતો હતો, દિશાઓના અંત પર્યંત વિશુદ્ધિ અને નિર્મળતા પથરાએલી હતી, જે વખતે સર્વ પક્ષીઓ પોતાના કલરવ વડે જયજય શબ્દનો ઉચ્ચાર કરી રહ્યાં હતાં, દક્ષિણ દિશાનો સુગંધી શીતળ પવન, પૃથ્વીને મંદમંદપણે સ્પર્શ કરતો, વિશ્વના પ્રાણીઓને સુખ-શાંતિ ઉપજાવી રહ્યો હતો, પૃથ્વી પણ સર્વ પ્રકારના ધાન્યાદિથી ઉભરાઈ રહી હતી અને જે વખતે સુકાળ આરોગ્ય વગેરે અનુકૂળ સંયોગોથી દેશવાસી લોકોનાં હૈયાં હર્ષના હિંડોળે ઝૂલી રહ્યાં હતાં, તેમજ વસંતોત્સવાદિની ક્રીડા દેશભરમાં ચાલી રહી હતી, તેવે વખતે, મધ્યરાત્રિને વિષે ઉત્તરાફાલ્ગુની નક્ષત્ર સાથે ચન્દ્રનો યોગ પ્રાપ્ત થતાં આરોગ્યવાળી ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ બાધારહિતપણે આરોગ્ય પુત્રને જન્મ આપ્યો.

ચિત્રમાં સુવર્ણના પલંગ ઉપર બિછાવેલી, વિવિધ જાતિનાં ફૂલોથી આચ્છાદિત કરેલી; સુગંધીદાર શય્યા ઉપર ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણી સૂતાં છે. જમણા હાથે પ્રભુ મહાવીરને બાળક રૂપે પકડીને તેમના તરફ-સન્મુખ જોઇ રહેલાં છે. તેમના જમણા હાથ નીચે તકીઓ છે. તેમનું સારૂં યે શરીર વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત છે. તેમના ઉત્તરીય વસ્ત્ર-સાડી-માં હંસપક્ષીની સુંદર ભાત ચીતરેલી છે. તેમનો પોષાક ચૌદમા સૈકાનાં શ્રીમંત વૈભવશાળી કુટુંબોની સ્ત્રીઓના પહેરવેશનો સુંદરમાં સુંદર ખ્યાલ આપે છે. પલંગની નીચે પાણીની ઝારી તેમજ પલંગમાંથી ઉતરતી વખતે પગ મૂકવા માટે પાદપીઠ-પગ મૂકવાનો બાજોઠ-પણ ચીતરેલ છે. ઉપરના ભાગની છતમાં ચંદરવો પણ બાંધેલો છે.

ચિત્ર ૧૨ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું નિર્વાણ—ઉપરોક્ત પ્રતમાંથી જ.

શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે જે વર્ષાકાળમાં મધ્યમ અપાપાપુરીને વિષે હસ્તિપાલ રાજાના કારકુનોની સભામાં છેલ્લું ચોમાસું વર્ષાઋતુમાં રહેવા માટે કર્યું, તે ચોમાસાને ચોથે મહિને, વર્ષાકાળને સાતમે પખવાડિયે એટલેકે કાર્તિક માસના (ગુજરાતી આસો માસના) કૃષ્ણ પખવાડિયામાં, તેના પંદરમે દિવસે (ગુજરાતી આસો માસની અમાસે), પાછલી રાત્રિએ કાળધર્મ પામ્યા. તેઓ સિદ્ધ થયા, બુદ્ધ થયા.

પ્રભુ મહાવીરની મૂર્તિ, જે પ્રમાણે ચિત્ર નં. ૯માં વર્ણવી ગયા તે પ્રમાણેનાં આભૂષણો સહિત ચીતરેલી છે. નિર્વાણ કલ્યાણકનો પ્રસંગ દર્શાવવા ખાતર સિદ્ધશિલાની આકૃતિ અને બંને

બાજુએ એકેક ઝાડ વધારામાં ચીતરેલાં છે. આ ચિત્રની પૃષ્ઠભૂમિ સીંદુરિયા રાતા રંગની છે. સિદ્ધશીલાનો રંગ સફેદ છે. આજુબાજુનાં બંને ઝાડનાં પાંદડાં લીલા રંગનાં છે. આ ઝાડનાં પાંદડાં ચિત્રકારે એટલાં બધાં બારીક અને સુકોમળ ચીતરેલાં છે કે તેનો સંપૂર્ણ ખ્યાલ આ હાફટોન ચિત્રથી કોઇપણ રીતે આવી શકે નહિ. અમદાવાદમાં લાલ દરવાજે આવેલી સીદીસૈયદની મસ્જિદની દીવાલમાં કોતરેલી સુંદર સ્થાપત્ય–જાળીઓની સુરચના મૂળ આવા કોઇ પ્રાચીન ચિત્રના અનુકરણમાંથી સરજાએલી હોય એમ મારૂં માનવું છે. સ્થાપત્યકામની એ દીર્ઘકાય જાળી કરતાં બે અગર અઢી ઇંચની ટૂંકી જગ્યામાંથી ફક્ત અરધા ઇંચ જેટલી જગ્યામાં ઝાડની પાંદડીએ પાંદડી ગણી શકાય એવા બારીક ઝાડની કલાનું સર્જન કરનાર ગુજરાતના પ્રાચીન ચિત્રકારો આજે પણ આપણને આશ્ચર્યમાં ગરકાવ કરી મૂકે છે.

ચિત્ર ૧૩ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું સમવસરણ—ઉપરોક્ત પ્રતમાંથી જ.

તીર્થંકરને કૈવલ્યજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થયા પછી દેવો સમવસરણની રચના કરે છે. આ સમવસરણની બે જાતની રચનાઓ આપણને પ્રાચીન ચિત્રોમાં મળી આવે છે. એક જાતની રચના ગોળાકૃતિમાં હોય છે અને બીજી જાતની ચતુષ્કોણ–ચાર ખૂણાવાળી–ચોખંડી હોય છે.

આ ચિત્ર ગોળાકૃતિવાળા સમવસરણનું છે. સમવસરણની મધ્યમાં મહાવીરની મૂર્તિ તથા આજુબાજુ ફરતા ત્રણ ગઢ છે. મસ્તકની પાછળના ભાગમાં અશોક વૃક્ષને બદલે બે બાજુ લટકતાં કમળ જેવી આકૃતિ ચીતરેલી છે. ગઢની ચારે દિશાએ એકેક દરવાજો તથા ગઢની બહાર ચારે ખૂણામાં એકેક વાપિકા–વાવ ચીતરેલી છે. પ્રસંગોપાત્ત સમવસરણનું ટૂંક વર્ણન અત્રે આપવું મને યોગ્ય લાગે છે.

'પ્રથમ[૮] વાયુકુમાર દેવો યોજનપ્રમાણ પૃથ્વી ઉપરથી કચરો, ઘાસ વગેરે દૂર કરી તેને શુદ્ધ કરે છે. પછીથી મેઘકુમાર દેવો સુગંધી જળની વૃષ્ટિ કરી એ પૃથ્વીનું સિંચન કરે છે. તીર્થંકરના ચરણોને પોતાના મસ્તકે ચડાવનાર આ પૃથ્વીની જાણે પૂજા કરતા હોય તેમ વ્યંતરો છ યે ઋતુના પચરંગી, સુગંધી, અધોમુખ ડીંટવાળાં પુષ્પોની જાનૂ પર્યંત વૃષ્ટિ કરે છે. ત્યાર બાદ વાણવ્યંતર દેવો સુવર્ણ, મણિ અને માણેક વડે પૃથ્વીતલ બાંધે છે, અર્થાત્ એક યોજન પર્યંતની આ પૃથ્વી ઉપર પીઠબંધ કરે છે. ચારે દિશાઓમાં તેઓ મનોહર તોરણો બાંધે છે. વિશેષમાં ભવ્ય જનોને દેશના સાંભળવા માટે બોલાવતો હોય તેમ તોરણોની ઉપર રહેલો ધ્વજાનો સમૂહ રચીને તેઓ સમવસરણને શોભાવે–સુશોભિત કરે છે. તોરણોની નીચે પૃથ્વીની પીઠ ઉપર આલેખાએલાં આઠ મંગળો મંગલતામાં ઉમેરો કરે છે.

વૈમાનિક દેવો અંદરનો, જ્યોતિષ્કો મધ્યેનો અને ભવનપતિ બહારનો ગઢ બનાવે છે. મણિના કાંગરાવાળો અને રત્નનો બનાવેલો અંદરનો ગઢ જાણે સાક્ષાત્ 'રોહણગિરિ' હોય તેમ શોભે છે. રત્નના કાંગરાવાળો અને સોનાનો બનાવેલો મધ્ય ગઢ અનેક દ્વીપોમાંથી આવેલા સૂર્યની શ્રેણિ જેવો ઝળકી રહે છે. સૌથી બહારનો ગઢ સોનાના કાંગરાવાળો અને રૂપાનો બનેલો હોવાથી તીર્થંકરને વંદન કરવા માટે જાણે સાક્ષાત્ વૈતાઢ્ય પર્વત આવ્યો હોય એમ ભાસે છે.'

આ પ્રતમાંના ચિત્રપ્રસંગો જુદીજુદી પ્રતોમાં આલેખાએલા હોવા છતાં આ ચિત્રો આલેખનમાં વધુ સુકોમળતાવાળા તેમજ કાંઇક વધારે રસિકતાથી આલેખાએલાં હોય એમ લાગે છે.

૮ વિસ્તૃત વર્ણન માટે જુઓ—૧ આવશ્યક નિર્યુક્તિ, ૨ ત્રિષષ્ઠીશલાકાપુરુષચરિત્ર, ૩ સમવસરણ પ્રકરણ, ૪ લોકપ્રકાશ સર્ગ ૩૦ આદિ ગ્રંથો, ૫ 'Jain Iconography (II Samavasarana)' by D. R. Bhandarkar M. A. in Indian Antiquary, Vol XL pp. 125 to 130 & 153 to 161, 1911.

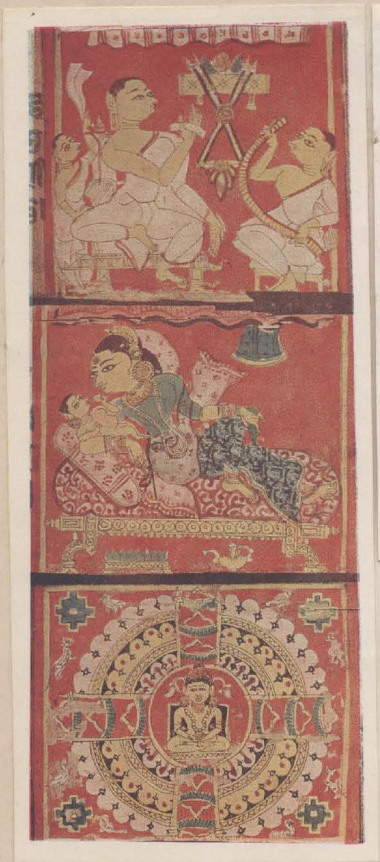

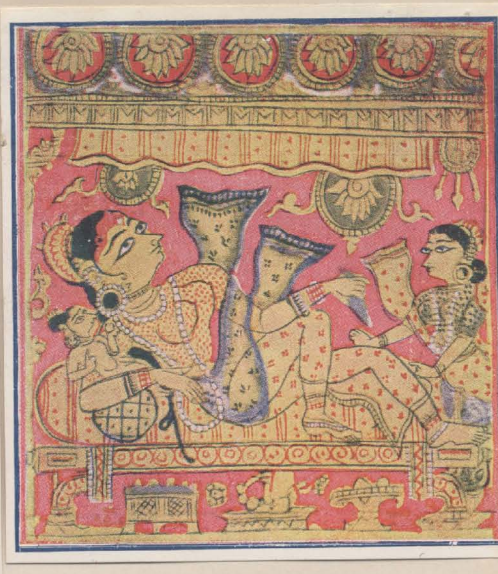

ચિત્ર ૧૭ : શ્રીમહાવીરનો જન્મ (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૧૪ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું દીક્ષા કલ્યાણક—વર્ણન માટે જુઓ નં. ૧૦ના આ જ ચિત્રનું વર્ણન.

ચિત્ર ૧૫ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું જન્મ કલ્યાણક—વર્ણન માટે જુઓ નં. ૧૧ના આ જ ચિત્રનું વર્ણન.

ચિત્ર ૧૬ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનું કૈવલ્ય કલ્યાણક—વર્ણન માટે જુઓ નં. ૧૩ના આ જ ચિત્રનું વર્ણન.

ચિત્ર ૧૭ પ્રભુ શ્રીમહાવીરનો જન્મ—ઇડરની પ્રતના પાના ૩૫ ઉપરથી. વર્ણન માટે જુઓ ચિત્ર ૧૧નું આ પ્રસંગને

૧૪ ૧૫ અને ૧૬ : (જુઓ બાજુએ) (વિ. સં. ૧૪૨૭)

ચિત્ર ૧૮ : અષ્ટમંગલ (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૧૯ : શ્રીપાર્શ્વનાથનો જન્મ (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૨૦ : શ્રીમહાવીરનિર્વાણ (ચૌદમો સૈકો)

લગતું વર્ણન. ચિત્ર ૧૧માં ત્રિશલા માતા મહાવીરના સન્મુખ જોઈ રહેલાં છે અને તે એકલાં જ છે, જ્યારે આ ચિત્રમાં ત્રિશલાના હાથમાં મહાવીર બાળક રૂપે છે; પરંતુ તેણીની નજર સ્ત્રી–નોકર જે પગ આગળ ઊભી છે તેની સન્મુખ છે અને ડાબા હાથે ત્રિશલા તે સ્ત્રી-નોકરને પુત્રજન્મની ખુશાલીમાં કાંઈક ઇનામ આપતાં હોય એમ લાગે છે. છતના ભાગમાં ચંદરવો બાંધેલો છે. પલંગની નીચે ચિત્રની જમણી બાજુથી અનુક્રમે શેક કરવા માટે સગડી તથા પગ મૂકીને ઊતરવા માટે પાદપીઠ છે. પાદપીઠ ઉપર રમકડા જેવી કાંઈક વસ્તુ છે જે સ્પષ્ટ સમજી શકાતી નથી અને થૂંકવા માટે પીકદાની છે. આ ચિત્ર મૂળ ચિત્ર કરતાં મોટું કરીને અત્રે રજુ કરેલું છે.

ચિત્ર ૧૮ અષ્ટ મંગલ—ઇડરની પ્રતના પાના ૨ ઉપરથી. અષ્ટમંગલનાં નામો અનુક્રમે નીચે પ્રમાણે છે: (૧) દર્પણ, (૨) ભદ્રાસન, (૩) વર્ધમાન સંપુટ, (૪) પૂર્ણ-કલશ, (૫) શ્રીવત્સ, (૬) મત્સ્યયુગલ, (૭) સ્વસ્તિક, (૮) નન્દ્યાવર્ત. વિસ્તૃત વર્ણન માટે જુઓ 'જૈન ચિત્રકલ્પદ્રુમ'માં આજ પ્રકારના ચિત્ર ૫૯નું વર્ણન.

ચિત્ર ૧૯ શ્રીપાર્શ્વનાથનો જન્મ—ઇડરની પ્રતના પાના ૫૮ ઉપરથી. મૂળ કદ ૨¾×૨½ ઇંચ ઉપરથી મોટું કરાવીને અત્રે રજુ કરેલું છે. સારૂં યે ચિત્ર સોનાની શાહીથી ચીતરેલું છે.

'તે કાળે અને તે સમયે હેમંત ઋતુનો બીજો માસ, ત્રીજું પખવાડિયું (પોષ માસનું કૃષ્ણ પખવાડિયું) વર્તતું હતું. તે પોષ માસના કૃષ્ણપખવાડિયાની દશમ (ગુજરાતી માગશર વદી દશમ)ની તિથિને વિષે નવ માસ બરાબર પૂર્ણ થતાં અને ઉપર સાડાસાત દિવસ વ્યતીત થતાં મધ્યરાત્રિને વિષે વિશાખા નક્ષત્રમાં ચન્દ્રનો યોગ પ્રાપ્ત થતાં, આરોગ્યવાળી તે વામાદેવીએ રોગરહિત પુત્રને જન્મ આપ્યો.'

ચિત્રમાં સુવર્ણના પલંગ ઉપર બિછાવેલી ફૂલની ચાદરવાળી સુગંધીદાર સુકોમળ શય્યા ઉપર વામાદેવી સૂતાં છે. જમણા હાથમાં પાર્શ્વકુમારને બાળક રૂપે પકડેલા છે અને તેમની સન્મુખ જોઈ રહેલાં છે. તેમના જમણા હાથ નીચે તકીઓ છે. આખું શરીર વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત છે. દરેક વસ્ત્રમાં જુદીજુદી જાતની ડિઝાઇનો ચીતરેલી છે. પલંગ ઉપર ચંદરવો બાંધેલો છે. પલંગની નીચે પાણીની ઝારી, ધૂપધાણું, સગડી તથા થૂંકદાની પણ ચીતરેલાં છે. તેણીના પગ આગળ એક સ્ત્રી–નોકર જમણા હાથમાં ચામર ઝાલીને પવન ઢોળતી ચીતરેલી છે.

ચિત્ર ૨૦ શ્રીમહાવીરનિર્વાણ—ઇડરની પ્રતના પાના ૫૨ ઉપરથી. ચિત્રના મૂળ કદ ૨½×૨½ ઇંચ ઉપરથી મોટું કરાવીને અત્રે રજુ કરવામાં આવ્યું છે. વર્ણન માટે જુઓ ચિત્ર ૧૨નું આ પ્રસંગને લગતું વર્ણન. ચિત્રમાં ફક્ત બંને બાજુનાં ઝાડની રજુઆત જુદા પ્રકારની છે તથા બંને બાજુ ઇન્દ્ર ક્ષીરોદકથી ભરેલા સુવર્ણકલશ ઝાલીને ઊભા છે તે સિવાય બધી બાબતમાં સમાનતા છે.

ચિત્ર ૨૧ કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રસૂરિને શ્રીજયસિંહદેવની વ્યાકરણ રચવા માટે પ્રાર્થના—પાટણના તપાગચ્છના ભંડારની તાડપત્રની પોથી ૧૯, પત્ર ૩૫૦માં બે વિભાગ છે. પહેલા વિભાગમાં પત્ર ૧ થી ૨૯૭ સુધી સિદ્ધહૈમચંદ્ર વ્યાકરણવૃત્તિ છે અને બીજા વિભાગમાં સિદ્ધહૈમચંદ્ર વ્યાકરણાંતર્ગત ગણપાઠ પત્ર ૨૯૮થી ૩૫૦ સુધી છે. અંતમાં લેખક વગેરેની પુષ્પિકા આદિ કશું યે નથી. પ્રતના પત્રની લંબાઈ ૧૨¾ ઇંચની અને પહોળાઈ ફક્ત ૨½ ઇંચની છે. અત્રે રજુ કરેલાં ચિત્રો પહેલા વિભાગના પત્ર ૧–૨ અને ૨૯૬–૨૯૭ ઉપરથી લીધેલાં છે. આ ચિત્રો પૈકીનાં પહેલાં બે (૨૧-૨૨) ગુજરાતના ઇતિહાસ માટે બહુ જ મહત્ત્વનાં હોવાથી મૂળ રંગમાં આ પુસ્તકના ચિત્ર ૨૫–૨૬ તરીકે આપ્યાં છે. જુઓ પૃ. ૧૭.

'એક વખતે અવંતિના ભંડારમાં રહેલાં પુસ્તકો ત્યાંના નિયુક્ત પુરુષોએ બતાવતાં તેમાં એક લક્ષણશાસ્ત્ર (વ્યાકરણ) રાજાના જોવામાં આવ્યું. એટલે તેણે ગુરુને પૂછ્યું કે આ શું છે? ત્યારે

ચિત્ર ૨૧ થી ૨૪: ઉપરથી અનુક્રમે—(૨૧) કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રસૂરિને શ્રી જયસિંહદેવની વ્યાકરણ રચવા માટે પ્રાર્થના; (૨૨) સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની હસ્તિ ઉપર સ્થાપના; (૨૩) શ્રી પાર્શ્વનાથનું દેરાસર: શા. વિક્રમ, શા કર્મણ તથા હીરાદે શ્રાવિકા; (૨૪) શ્રીઆનંદપ્રભ ઉપાધ્યાયને સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની પ્રત લખાવવા માટે મંત્રી કર્મણ વિનતિ કરે છે. (ચઉદમો સૈકો)

આચાર્ય મહારાજ (શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ) બોલ્યા કે "એ ભોજ વ્યાકરણ શબ્દશાસ્ત્ર તરીકે પ્રવર્તમાન છે. વિદ્વાનોમાં શિરોમણિ એવા માલવાધિપતિએ શબ્દશાસ્ત્ર, અલંકાર, નિમિત્ત અને તર્કશાસ્ત્ર રચેલાં છે, તેમજ ચિકિત્સા, રાજસિદ્ધાંત, વૃક્ષ, વાસ્તુ–ઉદય, અંક, શકુન, અધ્યાત્મ અને સ્વપ્ન તથા સામુદ્રિક શાસ્ત્રો પણ અહીં છે, ઉપરાંત નિમિત્તશાસ્ત્ર, વ્યાખ્યાન અને પ્રશ્નચૂડામણિ ગ્રંથો છે. વળી મેઘમાળા અર્થશાસ્ત્ર પણ છે અને એ બધા ગ્રંથો તે રાજાએ બનાવેલા છે."

આ પ્રમાણે સાંભળતાં સિદ્ધરાજ બોલી ઉઠ્યો કે "આપણા ભંડારમાં શું એ શાસ્ત્રો નથી? સમસ્ત ગૂર્જર દેશમાં શું કોઇ વિદ્વાન નથી?" ત્યારે બધા વિદ્વાનો મળીને શ્રીહેમચંદ્રસૂરિને જોવા લાગ્યા, એટલે મહાભક્તિથી રાજાએ નમ્રતાપૂર્વક વિનતિ કરી કે "હે ભગવન્! એક વ્યાકરણશાસ્ત્ર બનાવીને અમારા મનોરથ પૂરા કરો."[૯]

ચિત્ર નં. ૨૫ માં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે. તેમાં ચિત્રના પરિચયની શરૂઆત પહેલા ચિત્રથી થાય છે. જમણી બાજુએ ભદ્રાસન ઉપર શ્રીહેમચંદ્રસૂરિ બેઠા છે. તેઓના જમણા હાથમાં મુહપત્તિ છે તથા ડાબો હાથ તેઓશ્રીએ વરદ મુદ્રાએ રાખેલો છે. તેઓની સન્મુખ સ્થાપનાચાર્ય છે. જમણો ખભો ઉઘાડો છે. બગલમાં ઓઘો (જૈન સાધુઓનું જીવરક્ષાના ઉપયોગમાં આવતું એક ગરમ ઊનનું ઉપકરણ) છે. સામે એક શિષ્ય બે હાથે તાડપત્રનું એક પત્ર ઝાલીને બેઠા છે, જેના ઉપર 'સિદ્ધહૈમ'નું પહેલું સૂત્ર ॐ अर्हम् नमः સ્પષ્ટ લખેલું છે. શિષ્યની પાછળ બે હાથની અંજલિ જોડી નમ્ર વદને ગુરુશ્રીના વચનામૃતનું પાન કરતા બે રાજવંશી પુરુષો બેઠેલા છે. જેમાં એક વ્યક્તિના ચિત્ર ઉપર श्रीजयसिंहदेव અને બીજી વ્યક્તિના ચિત્ર ઉપર श्रीकुमारपालदेव આ પ્રમાણેના અક્ષરોથી નામો લખેલાં છે. ચિત્રની ઉપરના ભાગમાં श्रीहेमचन्द्रसूरि श्रीजयसिंहदेवराज्ञाभ्यर्थया सिद्धहेमचन्द्रव्याकरणनिर्मापयति આ પ્રમાણેના સ્પષ્ટ અક્ષરો લખેલા છે. જે સમયે સિદ્ધરાજ જયસિંહદેવ તથા કુમારપાલદેવ બે મહાન ગૂર્જરેશ્વરો જૈન ધર્મનું તથા જૈનાચાર્યોનું આ પ્રમાણે બહુમાન કરતા હશે તે સમયે ગુજરાતની પુણ્યભૂમિ ઉપર અહિંસાનું કેટલું બધું પ્રાબલ્ય પ્રવર્તતું હશે તેનો ખ્યાલ સુદ્ધાં આજના પરતંત્ર વાતાવરણમાં આવવો મુશ્કેલ છે. ચિત્રમાં સિદ્ધરાજ જયસિંહદેવ તથા કુમારપાલદેવની એકી સાથે જ રજુઆત કરેલી હોવાથી આ પ્રત બંનેની હયાતી બાદ લખાઇ હશે તેમ સાબિતી આપે છે. જોકે ચિત્રમાં વપરાએલા રંગો તથા લિપિ પણ એ વાતની સાબિતી આપે છે જ. આ ચિત્રના અનુસંધાને નીચેના ચિત્રમાં વર્ણવેલી 'સિદ્ધહૈમ' વ્યાકરણના પ્રચારને લગતી ઘટનાનો પ્રસંગ જોવાનો છે. 'પોતાના કુળને શોભાવનાર એવો કાકલ નામે એક કાયસ્થ હતો જે આઠ વ્યાકરણનો અભ્યાસી અને પ્રજ્ઞાવાન હતો. તેને જોતાં જ આચાર્યશ્રીએ વ્યાકરણશાસ્ત્રના તત્ત્વાર્થને જાણનાર એવા તેને તરત જ અધ્યાપક બનાવ્યો. પછી પ્રતિમાસે જ્ઞાનપંચમી (શુકલ પંચમી)ના દિવસે તે પ્રશ્નો પૂછી લેતો અને ત્યાં અભ્યાસમાં પ્રવૃત્ત થએલા વિદ્યાર્થીઓને રાજા કંકણાદિથી વિભૂષિત કરતો. એમ એ શાસ્ત્રમાં નિષ્ણાત થએલા જનોને રાજા રેશમી વસ્ત્રો, કનકાભૂષણો, સુખાસન અને આતપત્રથી અલંકૃત કરતો'.[૧૦]

ચિત્રમાં ઉપરના ભાગમાં पण्डितच्छात्रान् व्याकरणं पाठयति એમ સ્પષ્ટ લખેલું છે. જમણી બાજુએ લાકડાના ઊંચા આસન પર જમણા હાથમાં સોટી લઇ (વિદ્યાર્થીઓને શિક્ષા કરવા) અને ડાબા હાથની તર્જની આંગળી ઊંચી કરીને પંડિત સામે બેઠેલા વિદ્યાર્થીઓને તર્જના કરતો અને અભ્યાસ કરાવતો બેઠેલો છે. તેના ગળામાં ઉપવીત–જનોઇ–નાખેલી છે. તેનો ચહેરો પ્રૌઢ, પ્રતિભાવાન અને બુદ્ધિશાળી હોવાની ખાત્રી આપે છે. ઉપરના છતના ભાગમાં ચંદરવો બાંધેલો છે, વચ્ચે સ્થાપનાચાર્ય

૯ જુઓ 'श्रीप्रभावकचरिते श्रीहेमचन्द्रसूरिप्रबन्धः શ્લો. ૭૪ થી ૮૧ સુધી.

૧૦ જુઓ श्रीप्रभावकचरिते श्रीहेमचन्द्रसूरिप्रबन्धे શ્લો. ૧૧૨ થી ૧૧૫

ઉપર પુસ્તક મૂકેલું છે જે ઘણું કરીને 'સિદ્ધહૈમ' વ્યાકરણની પ્રત હશે એમ લાગે છે. પંડિતની સામી બાજુએ ચારે વિદ્યાર્થીઓ બંને હાથમાં 'સિદ્ધહૈમ'નું પહેલું સૂત્ર ॐ अर्हम् नमः અક્ષરો લખેલું પત્ર લઇને અભ્યાસમાં પ્રવૃત્તિ કરતા હોય એમ લાગે છે. આ ચિત્ર પ્રતના બીજા પત્ર ઉપરથી લીધેલું છે.

ચિત્ર ૨૨ સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની હસ્તિ ઉપર સ્થાપના—ઉપર્યુક્ત પ્રતના પત્ર ૨ ઉપરનો ચિત્રપ્રસંગ.

આ ચિત્રમાં પણ ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે: તેમાં ચિત્રના પરિચયની શરૂઆત ઉપરના જિનમંદિરના ચિત્રથી થાય છે. ડાબી બાજુએ સિદ્ધરાજ જયસિંહદેવ પોતે બંધાવેલા રાયવિહાર[૧૧] નામના ચૈત્યમાં શ્રીજિનેશ્વરદેવની બે હાથની અંજલિ જોડીને સ્તુતિ કરતા દેખાય છે. જમણી બાજુએ રાજહસ્તિ ઉપર મહારાજાધિરાજ ગૂર્જરેશ્વર સિદ્ધરાજ જયસિંહદેવની સવારી હોય એમ લાગે છે. તેના ડાબા હાથમાં ખુલ્લી તલવાર છે અને જમણા હાથમાં 'સિદ્ધહૈમ'ના પ્રતિનું એક પત્ર પકડયું હોય એમ લાગે છે. હાથીના કુંભસ્થળ ઉપર માવત જમણા હાથમાં અંકુશ લઇને બેઠેલો છે. માવતના મસ્તકની ઉપરના ભાગમાં શ્વેત છત્રના દંડનો ભાગ દેખાય છે. હાથીની પાછળ ચામર ધરનારી એક સ્ત્રી જમણા હાથથી ચામર વીંઝતી ઊભેલી છે. હાથીની જમણી બાજુએ એક પુરુષ ઢોલ વગાડતો દેખાય છે. આ પ્રસંગને લગતો ઉલ્લેખ 'પ્રબંધચિંતામણિ'માં શ્રીમેરૂતુંગસૂરિએ કરેલો છે:

'શ્રીહેમચંદ્રસૂરિએ સમસ્ત વ્યાકરણને અવગાહન કરી એક જ વર્ષમાં સવાલાખ શ્લોકપ્રમાણ એવું પંચાંગપૂર્ણ વ્યાકરણ રચ્યું અને રાજા તથા પોતાની સ્મૃતિ–યાદગીરી–માં તેનું નામ 'સિદ્ધહૈમ' રાખ્યું. વળી આ ગ્રંથ રાજાની સવારીના હાથી ઉપર રાખી રાજાના દરબારમાં લાવવામાં આવ્યો. હાથી પર બે ચામર ધરનારી સ્ત્રીઓ બંને બાજુ ચામર ઢાળતી હતી અને ગ્રંથ પર શ્વેત છત્ર ધર્યું હતું ત્યાર પછી તેનું પઠન રાજસભાના વિદ્વાનો પાસે કરવામાં આવ્યું અને રાજાએ સમુચિત પૂજોપચાર કર્યા પછી તેને રાજકીય સરસ્વતી કોશમાં સ્થાપિત કરવામાં આવ્યું.'[૧૨]

આ પછી ચિત્રના અનુસંધાને, તેના પ્રચારને અંગે તેના વિદ્યાર્થીઓને પારિતોષિકાદિ આપવાનો નીચેના ભાગમાં વર્ણવેલો પ્રસંગ જોવાનો છે. ડાબી બાજુએ શ્રીવીરકુમારનામનો રાજ્યાધિકારી સિંહાસન ઉપર વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જ થઇને બેઠો છે તેણે જમણા ખભા ઉપર ઉઘાડી તલવાર જમણા હાથે મૂઠમાંથી પકડીને રાખેલી છે અને ડાબા હાથની તર્જની આંગળી ઊંચી કરીને હાથની મૂઠીમાં કાંઇક—ઘણું કરીને સામે બે હાથની અંજલિ જોડીને બેઠેલા વિદ્યાર્થીઓને પારિતોષિક આપવાની વસ્તુ—રાખીને બોલતો દેખાય છે. વિદ્યાર્થીની પાછળ, ગળામાં જનોઇ સહિત, ડાબા ખભા ઉપર સોટી રાખીને જમણા હાથની તર્જની આંગળી અને અંગુઠાને ભેગા રાખીને ઊભેલો કાકલ કાયસ્થ પંડિત આ વિદ્યાર્થી ઘણું જ સારૂં ભણ્યો છે એમ સંતોષ બતાવતો અને વીરકુમારને પારિતોષિક આપવાનું કહેતો હોય એમ લાગે છે. વિદ્યાર્થીની યુવાન વય બતાવવા ચિત્રકારે દાઢી અગર મૂછના વાળની રજુઆત કરી નથી. મારી માન્યતા પ્રમાણે જેવી રીતે કાકલ કાયસ્થને પંડિત તરીકે આ વ્યાકરણનો અધ્યાપક નીમવામાં આવ્યો હતો તેવી જ રીતે ચિત્રમાં વર્ણવેલા શ્રીવીરકુમારને તેના પ્રચારના અને તેમાં ઉત્તીર્ણ થનાર વિદ્યાર્થીઓને પારિતોષિકાદિ આપવાના અધિકારપદે નીમવામાં આવ્યો હશે. આ ચિત્રમાં આપણને તેનો પ્રચાર કરનાર અધિકારીનું નામ મળી આવે છે જે ગુજરાતના ઇતિહાસને માટે મહત્ત્વનું છે.

---

૧૧ જુઓ શ્રીમદ્રાજવિહારેसावायययावुत्सवोन्नतो ।

दृष्ट्वार्हतं द्वितियञ्च पदं प्रणिजगाद सः ।। २२६ ।। –श्रीप्रभावकचरिते श्रीहेमचन्द्रसूरिप्रबन्धे

૧૨ જુઓ श्रीप्रबन्धचिन्तामणे तृतीयप्रकाशः पृष्ठ ६०–६२. સંપાદક: જિનવિજયજી

ચિત્ર ૨૩ શ્રીપાર્શ્વનાથનું દેરાસર—શા. વિક્રમ, શા. રાજસિંહ, શા કર્મણ તથા હીરાદે શ્રાવિકા—ઉપર્યુક્ત પ્રતના પાના ૨૯૬ ઉપરનું ચિત્ર. ચિત્રનું કદ $૨\frac{૧}{૧૬}\times૨\frac{૧૫}{૧૬}$ ઇંચ છે.

જમણી બાજુ શ્રીપાર્શ્વનાથ પ્રભુનું શિખરબંધ દેરાસર છે, જેમાં મધ્ય ભાગમાં નીલ વર્ણની શ્રીપાર્શ્વનાથ પ્રભુની સુંદર મૂર્તિ આભૂષણો સહિત બિરાજમાન છે. મસ્તકે શ્યામ રંગની સાત ફણાઓ છે. મૂર્તિની સન્મુખ ગર્ભાગારની બહાર રંગમંડપમાં सा. विक्रम, सा. राजसिंह, सा. कर्मणનામના ત્રણ પુરુષો તથા श्राविका हीरादेवी નામની એક સ્ત્રી અનુક્રમે છે. સઘળાં બે હાથની અંજલિ જોડીને પ્રભુની સ્તુતિ કરતાં ઊભાં છે. દેરાસરનું શિખર આકાશમાં ઊડતી ધ્વજા સહિત દેખાય છે, શિખર તથા રંગમંડપ ગુજરાતની મધ્યકાલીન સ્થાપત્યકળાના સુંદર નમૂના છે. શિખરની બંને બાજુએ ઊડતાં પક્ષીઓની તથા રંગમંડપ ઉપરથી કૂદકા મારીને શિખર તરફ જતાં ત્રણ વાંદરાંઓની રજુઆત કરવામાં, આ દેરાસર ગગનચુંબી છે તેમ બતાવવાનો ચિત્રકારનો ઇરાદો છે. सा. विक्रम, सा. राजसिंह તથા सा. कर्मण ત્રણે સગા ભાઇઓ તથા વૈભવશાળી ગૃહસ્થ-શ્રાવકો હશે તેમ તેઓના પહેરવેશ ઉપરથી જણાઇ આવે છે. મારી માન્યતા પ્રમાણે કદાચ ચિત્રમાં રજુ કરેલું પાર્શ્વનાથનું મંદિર પણ તેઓએ બંધાવ્યું હોય. ગુજરાતનાં પ્રાચીન ચિત્રોમાં વાંદરાંની રજુઆત સૌથી પ્રથમ આ ચિત્રમાં મળી આવે છે. જોકે વિ. સં. ૧૪૯૦ (ઇ.સ.૧૪૪૩)ના કાપડ ઉપર ચીતરાએલા પંચતીર્થી પટમાં પણ વાંદરાંની રજુઆત કરવામાં આવી છે, પરંતુ તે પટ આપણા આ ચિત્રથી પછીના સમયનો છે.

ચિત્ર ૨૪ આનંદપ્રભ ઉપાધ્યાયને સિદ્ધહેમ વ્યાકરણની પ્રત લખાવવા માટે મંત્રી કર્મણ વિનતિ કરે છે—ઉપરના ચિત્રના અનુસંધાનનું આ ચિત્ર મૂળ પ્રતના પાના ૨૯૭ ઉપરથી લેવામાં આવ્યું છે. ચિત્રનું કદ $૨\frac{૧}{૨}\times૨\frac{૧૫}{૧૬}$ છે. ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે. તેમાં ચિત્રના પરિચયની શરૂઆત ઉપરના ચિત્રથી થાય છે. જમણી બાજુએ સિંહાસન ઉપર आनन्दप्रभोपाध्याय નામના જૈન સાધુ જમણા હાથમાં મુહપત્તિ રાખીને તથા ડાબો હાથ ઢીંચણ ઉપર ટેકવીને સામે બેઠેલા શિષ્યને પાઠ આપતા હોય એમ લાગે છે. સામે બેઠેલા શિષ્યનું નામ कीर्तितिलकमुनि છે. કીર્તિતિલક મુનિના બંને હાથમાં તાડપત્રનું એક પત્ર છે. તેમની પાછળ सा. कर्मण તથા ઉપરના ભાગમાં सा. विक्रमसिंह બે હાથની અંજલિ જોડીને બેઠેલા અને ગુરુના ઉપદેશનું શ્રવણ કરતા દેખાય છે. આ પછી ચિત્રના અનુસંધાને નીચેના ચિત્રમાં બે સાધ્વીઓ કે જેમનાં નામ અનુક્રમે श्रीपद्मकांतिगणिनो તથા श्रीसुव्रतप्रभामहत्तरामुख्या છે અને બંને સાધ્વીઓની સામે બે શ્રાવિકાઓ છે જેમાં એકનું નામ वा० हीरादेविमुख्याश्राविका: એટલે વાયટગચ્છીય હીરાદેવી મુખ્ય શ્રાવિકા છે. ઉપર્યુક્ત ચિત્રની બધી વ્યક્તિઓ તથા નીચેના ચિત્રની સાધ્વીઓ તથા શ્રાવિકાઓ આનંદપ્રભોપાધ્યાયનો ઉપદેશ શ્રવણ કરે છે. વિશેષ તો પ્રત લખાવનારના સમયના મુખ્ય સાધુઓ, સાધ્વીઓ, શ્રાવકો તથા શ્રાવિકાઓનાં નામ સાથેના આ ચિત્રો હોઇને તે આપણને તે સમયના ચતુર્વિધ સંઘના રીતરિવાજો તથા પહેરવેશોનો બહુ જ સુંદર ખ્યાલ પૂરો પાડે છે.

આ ચિત્રોમાં મુખ્યત્વે કરીને લાલ, કાળો, ધોળો, પીળો, લીલો તથા ગુલાબી રંગનો ઉપયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ચિત્ર ૨૨–૨૩માં જિનમંદિરોની રજુઆતમાં તે સમયનાં જિનમંદિરોની સ્થાપત્યરચનાનું, તથા ચિત્ર ૨૨–૨૩–૨૪માં સ્ત્રી-પુરુષોના પહેરવેશો તેમજ તે સમયના ગુજરાતના વૈભવશાળી ગૃહસ્થોના રીતરિવાજોનું ભાન કરાવનારા પુરાવા છે. ચિત્ર ૨૨માં હાથીનો જે રંગ પોપટીઓ લીલો છે તે ચિત્રકારની કલ્પના માત્ર છે અને તે બતાવીને તેનો આશય આ હાથી સામાન્ય નથી પણ વિશિષ્ટ જાતિનો છે તે બતાવવાનો છે. ચિત્ર ૨૩–૨૪માં સા. વિક્રમ, સા. રાજસિંહ તથા સા. કર્મણના માથાની પાછળના ભાગમાં અંબોડા વાળેલા છે અને અંબોડામાં દરેકે માથાનો ખૂંપ (માથે પહેરવામાં આવતો દાગીનો) ઘાલેલો છે તે રિવાજ આજે સ્ત્રીઓમાં હજુ ચાલુ છે, પરંતુ ગુજરાતના

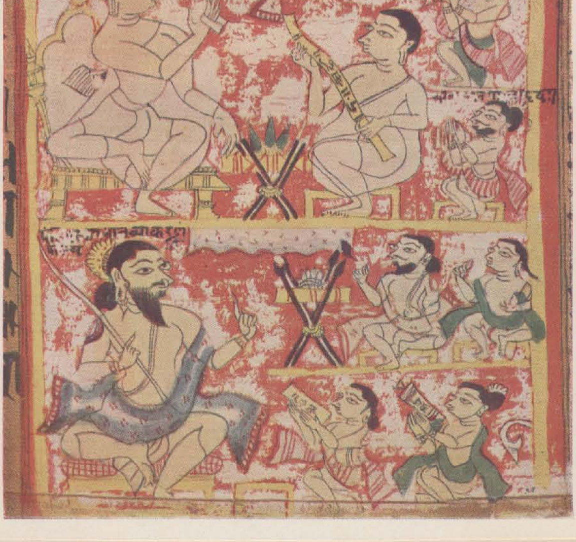

ઉપર–ચિત્ર ૨૫ : સિદ્ધહૈમ વ્યાકરણની હસ્તિ ઉપર સ્થાપના,
નીચે-ચિત્ર ૨૬ : કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચન્દ્રસૂરિને શ્રી જયસિંહદેવની
વ્યાકરણ રચવા માટે પ્રાર્થના (ચૌદમો સૈકો)

પુરુષોમાંથી હાલમાં નાબૂદ થઈ ગએલો છે. ચિત્ર ૨૩ તથા ૨૪માં હીરાદેવી પ્રમુખ શ્રાવિકાએ માથે સાડી ઓઢેલી નથી અને કાનમાં ગોટી વાળીઓ તથા કર્ણફૂલ ઘાલેલાં છે. ચિત્ર ૨૪માંની બે સાધ્વીઓનાં માથાં પણ ખુલ્લાં છે જે તે સમયના પહેરવેશનું દિગ્દર્શન કરાવનારા નમૂના છે. પ્રાચીન ચિત્રોમાં સ્ત્રીઓની આકૃતિ કંચુકી તથા સ્તનની રજુઆતથી પુરુષની આકૃતિને મુકાબલે તરત જ જુદી તરી આવે છે.

પ્રત લખાવનાર સંબંધી માહિતી

કર્મણ નામે અમદાવાદના એક સુલતાનનો મંત્રી પંદરમા સૈકામાં થએલો છે, જેણે અમદાવાદમાં આચાર્યશ્રી સોમજયસૂરિના શિષ્ય મહીસમુદ્રને વાચકપદ અપાવ્યું હતું.[13] પરંતુ બીજા નામો સાથે સરખાવતાં તથા પ્રતની લિપિ જોતાં આ પ્રત તેરમા અગર ચૌદમા સૈકામાં લખાએલી હોય એવી લાગે છે તેથી આ પ્રત લખાવનાર ઉપર્યુક્ત કર્મણ હોવાની સંભાવના બહુ જ ઓછી છે.

આ પ્રત ચૌદમા સૈકા દરમ્યાન લખાએલી હોય એમ લાગે છે. પ્રતનાં ચિત્રોમાં સમકાલીન સૃષ્ટિની છાપ ઊતરી છે. જૂનાં ખોખાં પ્રમાણે ચિત્રો દોરવા છતાં પાત્રો, પ્રાણીઓ વગેરેનાં રૂપરંગ તાદૃશ બન્યાં છે.

ચિત્ર ૨૫ તથા **ચિત્ર ૨૬** જુઓ અનુક્રમે ચિત્ર ૨૨ તથા ચિત્ર ૨૧નું વર્ણન.

ચિત્ર ૨૭ શ્રીપાર્શ્વનાથનું ચ્યવન—ઈડરની પ્રતના પાના ૫૭ ઉપરથી. ચિત્રના મૂળ કદ ૨$\frac{3}{4}$×૨$\frac{3}{4}$ ઈંચ ઉપરથી મોટું કરીને અત્રે રજૂ કરવામાં આવ્યું છે.

'પુરુષપ્રધાન અર્હન્ શ્રીપાર્શ્વનાથ ગ્રીષ્મકાળના પહેલા માસમાં, પહેલા પખવાડિયામાં, ચૈત્ર માસના કૃષ્ણપક્ષમાં (ગુજરાતી ફાગણ માસમાં) ચોથની રાત્રિને વિષે, વીસ સાગરોપમની સ્થિતિવાળા પ્રાણત નામના દશમા દેવલોકથી ચ્યવીને વારાણસી નગરીના અશ્વસેન નામે રાજાની વામાદેવી પટરાણીની કુક્ષિને વિષે મધ્યરાત્રિએ વિશાખા નક્ષત્રમાં ચન્દ્રનો યોગ પ્રાપ્ત થતાં દેવ સંબંધી, આહાર, ભવ અને શરીરનો ત્યાગ કરી ગર્ભપણે ઉત્પન્ન થયા.'

પાર્શ્વનાથ ભગવાનની નીલ વર્ણની પદ્માસનસ્થ મૂર્તિ ચ્યવન કલ્યાણક દર્શાવવા અત્રે રજુ કરી છે. મસ્તક ઉપર કાળા રંગની ધરણેન્દ્રની સાત ફણા છે. મૂર્તિ આભૂષણોથી શણગારેલી છે. પદ્માસન વગેરેનું વર્ણન અગાઉ ચિત્ર ૯માં આપણે જોઈ ગયા છીએ.

ચિત્ર ૨૮ શ્રીપાર્શ્વનાથનો પંચમુષ્ટિ લોચ—ઈડરની પ્રતના પાના ૬૦ ઉપરથી. મૂળ ચિત્રના કદ ૨$\frac{3}{4}$×૨$\frac{3}{4}$ ઈંચ ઉપરથી મોટું કરીને અત્રે રજૂ કર્યું છે.

'શ્રીપાર્શ્વનાથ પ્રભુએ શ્રમણપણું અંગીકાર કર્યું ત્યારે હેમંતઋતુનું ત્રીજું પખવાડિયું–પોષ માસનો કૃષ્ણપક્ષ વર્તતો હતો. તે પખવાડિયાની અગિયારશના દિવસે (ગુજરાતી માગશર વદી અગિયારશે), પહેલા પ્રહરને વિષે, વિશાલા નામની પાલખીમાં બેસીને આશ્રમપદ ઉદ્યાનમાં, અશોક નામના ઉત્તમ વૃક્ષની પાસે આવી, પાલખીમાંથી નીચે ઊતરી, પોતાની મેળે જ પોતાનાં આભૂષણ વગેરે ઊતાર્યાં અને પોતાની મેળે જ પંચમુષ્ટિ લોચ કર્યો.' આખી યે ચિત્રમાલામાં આ ચિત્ર બહુ જ ધ્યાન ખેંચે તેવી રીતે ચિત્રકારે તાદૃશ ચીતર્યું છે. આજુબાજુના ઝાડની ગોઠવણી બહુ જ સુંદર પ્રકારની છે આખું યે મૂળ ચિત્ર સોનાની શાહીથી ચીતરેલું છે.

---

૧૩ જુઓ श्रीतीर्थयात्राप्रमुखपुण्यकारिणा श्रीकर्मणाऽऽह्वेन महीपमन्त्रिणा।
महीसमुद्राभिधपण्डितप्रभोः पादाय्युपाध्याय पदं विवेकिना ॥ २७ ॥
—गुरुगुणरत्नाकरकाव्य सर्ग ३, पृष्ठ ३८

ચિત્ર ૨૭ : શ્રીપાર્શ્વનાથનું ચ્યવન (ચૌદમો સૈકો)

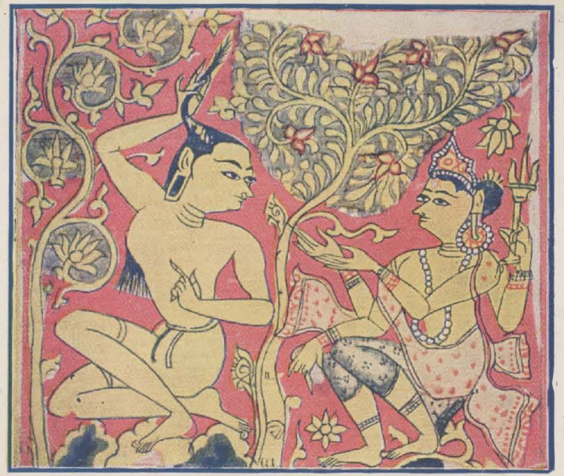

ચિત્ર ૨૮ : શ્રીપાર્શ્વનાથનો પંચમુષ્ટિ લોચ (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૨૯ શ્રીમહાવીરપ્રભુ—સારાભાઈ નવાબના સંગ્રહમાંથી. કાલકકથાની તાડપત્રની પ્રતના પાનાનું મૂળ કદનું લગભગ ચૌદમી સદીનું આ ચિત્ર તે સમયનાં જિનમંદિરોની સ્થાપત્યરચનાનો સુંદર ખ્યાલ આપે છે. સ્થાપત્ય, શણગાર તથા તેની કુદરતી આંખો, મૃદુ-કોમળ છતાં પ્રમાણોપેત હાસ્ય કરતું મુખ, તે સમયના ચિત્રકારોની ભાવ અર્પણ કરવાની શક્તિનો સાક્ષાત પરિચય આપે છે. મૂર્તિની બેઠકની નીચે પબાસનમાં વચ્ચે કમળ, બંને બાજુએ એકેક હાથી, એકેક સિંહ તથા કિન્નર ચીતરેલા છે. મૂર્તિની આજુબાજુ બે ચામરધારી દેવો ઊભા છે. મસ્તકની બાજુમાં એકેક સ્ત્રી ફૂલની માળા લઈને અને તે દરેકની પાછળ ખાલી હાથે ઊભી રહેલી એકેક વ્યક્તિ ચીતરેલી છે. મૂર્તિના મસ્તકની ઉપરના ભાગમાં લટકતું છત્ર છે. આ ચિત્રથી તાડપત્રની ચિત્રકળાનો વિભાગ સમાપ્ત થાય છે.

ચિત્ર ૩૦ જમણી બાજુ: શ્રીપાર્શ્વનાથ કાઉસગ્ગ ધ્યાનમાં; ડાબી બાજુ: શ્રીપાર્શ્વનાથનું નિર્વાણ અને ધરણેન્દ્ર તથા તેની પટરાણી—ઈડરની પ્રતના પત્ર ૬૧ ઉપરથી. આ ચિત્ર મૂળ કદમાં તેના લખાણ સાથે લીધેલું છે.

ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે; તેમાં કથાના પરિચયની શરૂઆત નીચેના ઉપસર્ગના ચિત્રથી થાય છે. 'શ્રીપાર્શ્વનાથ પ્રભુ શ્રમણપણું અંગીકાર કર્યા પછી, વિચરતા થકા, એકદા કોઈ તાપસના આશ્રમમાં આવી ચડ્યા. ત્યાં રાત્રીને વિષે એક કુવાની નજીકમાં જ વટવૃક્ષ નીચે પ્રતિમાધ્યાને સ્થિર થયા. તે સમયે કમઠના જીવ મેઘમાલી નામના દેવે કલ્પાંતકાળના મેઘની પેઠે વરસાદ વરસાવવા માંડ્યો. આકાશ અને પૃથ્વી પણ જળમય જેવાં બની ગયાં. જળનો જોસબંધ પ્રવાહ પ્રભુના ઘૂંટણ પર્યંત પહોંચ્યો. ક્ષણવારમાં પ્રભુની કેડ સુધી પાણી પહોંચ્યું અને જોતજોતામાં કંઠની ઉપરવટ થઈને નાસિકાના અગ્રભાગ સુધી પાણી ફરી વળ્યું. છતાં પ્રભુ તો અચળ અને અડગ જ રહ્યા. એ અવસરે ધરણેન્દ્રનું આસન કંપ્યું. તેણે અવધિજ્ઞાનથી પ્રભુ ઉપર ભયંકર ઉપદ્રવ થતો જોયો. તત્કાળ ધરણેન્દ્ર પોતાની પટરાણીઓ સહિત પ્રભુની પાસે આવ્યા અને ભક્તિભાવભર્યો નમસ્કાર કરી તેમના મસ્તક ઉપર ફણાઓ રૂપી છત્ર ધરી રાખ્યું.'

જમણી બાજુએ પાર્શ્વનાથ પ્રભુની પાછળ ગરદન સુધી જળ બતાવવા માટે ચિત્રકારે ઝાંખા લીલા રંગના લીટા મારીને જળની આકૃતિ ઉપજાવી કાઢી છે. તેમના પગની નીચે એક સ્વરૂપે ધરણેન્દ્ર બે હાથ જોડી પદ્માસને બેસીને અને પલાંઠી વાળેલા પોતાના બંને પગ ઉપર પ્રભુના બે પગ રાખીને બેઠો છે; બીજું સ્વરૂપ નાગનું કરી, આખા શરીરને વીંટળાઈ વળી, સાત ફણાઓ રૂપી છત્ર મસ્તક ઉપર ધરી રહ્યો છે; ત્રીજા મૂળ રૂપે તે પાર્શ્વનાથ પ્રભુની ડાબી બાજુએ બે હાથની અંજલિ જોડીને પ્રભુની સ્તુતિ કરતો ઊભો છે. તેની પાછળ તેની પટરાણી બે હસ્તની અંજલિ જોડીને પ્રભુના ગુણગાન કરતી ઊભી છે. ધરણેન્દ્રે આટલી બધી ભક્તિ કરી અને કમઠે પ્રભુની આટલી બધી કદર્થના કરી. બંનેએ પોતપોતાને ઉચિત કાર્યો કર્યા છતાં બંને તરફ સમાન દૃષ્ટિવાળા પ્રભુ પાર્શ્વનાથ જગતનું કલ્યાણ કરનારા હોવાથી કેમ વંદનીય ન થાય? આ પછી ચિત્રના અનુસંધાને ઉપરના ચિત્રમાં વર્ણવેલો પ્રભુ પાર્શ્વનાથના નિર્વાણનો પ્રસંગ જોવાનો છે. 'વર્ષાકાળના પહેલા મહિનાના બીજા પખવાડિયામાં, શ્રાવણ શુકલ અષ્ટમીના દિવસે, સમ્મેત નામના પર્વતના શિખર ઉપર જળરહિત માસક્ષમણ (એક મહિનાના ઉપવાસ)નું તપ કરી પાર્શ્વનાથ પ્રભુ નિર્વાણ પામ્યા—મોક્ષે ગયા.'

ચિત્ર ૩૧ શ્રીઋષભદેવનું નિર્વાણ—ઈડરની પ્રતના પાના ૭૮ ઉપરથી. ચિત્રનું મૂળ કદ ૨$\frac{3}{4}$×૨$\frac{1}{2}$ ઇંચ ઉપરથી મોટું કરીને અત્રે રજૂ કર્યું છે.

'શ્રીઋષભદેવ પ્રભુ શિયાળાના ત્રીજા માસમાં, પાંચમા પખવાડિયામાં, માઘ માસની વદિ તેરશ (ગુજરાતી પોષ વદિ ૧૩) ને દિવસે અષ્ટાપદ પર્વતના શિખર ઉપર, જળ રહિત ચૌદભક્ત,

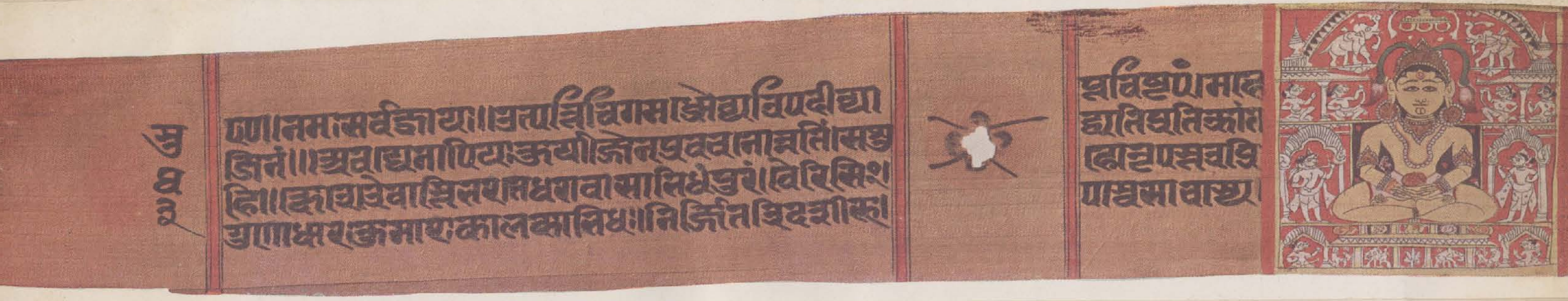

ચિત્ર ૨૯ : શ્રીમહાવીર (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૩૦ : શ્રી પાર્શ્વનાથ કાઉસગ્ગ ધ્યાનમાં; ડાબી બાજુ . શ્રી પાર્શ્વનાથનું નિર્વાણ અને ધરણેન્દ્ર તથા તેની પટરાણી (ચૌદમો સૈકો)

ચિત્ર ૩૧ : શ્રીઋષભદેવનું નિર્વાણ

છ ઉપવાસનો તપ કરી, અભિજિત્ નામના નક્ષત્રને વિષે ચંદ્રનો યોગ પ્રાપ્ત થતાં, સવારના સમયે પલ્યંકાસને બેસીને નિર્વાણ પામ્યા.'

ચિત્રમાં સર્વ આભૂષણો સહિત સિદ્ધશિલા ઉપર બેઠેલા ઋષભદેવ પ્રભુની અને આજુબાજુ બે ઝાડની રજૂઆત કરીને ચિત્રકારે શ્રીઋષભદેવના નિર્વાણકલ્યાણકનો પ્રસંગ ચીતરેલો છે.

ઈડરની આ પ્રતમાંના દરેક ચિત્રની પૃષ્ઠભૂમિ સીંદુરિયા લાલ રંગની છે. આ બન્ને ચિત્રો અસલ માપે ઉતારેલાં છે. તેમાં રંગભરણીની સરસ વહેંચણી તથા વાતાવરણ અને પદાર્થોની ઝીણવટમાં પરંપરાગત આકૃતિઓ ચીતરી છે, પણ મૂળ આકારોનો પ્રત્યક્ષ પરિચય નહિ હોવાથી ચિત્રકારોએ નક્કી કરેલાં આકારોનાં કૃત્રિમ રૂપો ચિત્રકાર ચીતર્યે ગયો છે; છતાં સુશોભનોમાં જરા યે તે પાછો પડતો નથી. આ પ્રતમાં સોનાની શાહીનો ખૂબ છૂટથી ઉપયોગ કરવામાં આવ્યો છે. ચિત્રનાં પાત્રો ચીતરવામાં તાડપત્ર ઉપર સુવર્ણની શાહીનો ઉપયોગ આ એક જ પ્રતમાં કરવામાં આવ્યો છે. ઉપરાંત, સીંદુરિયો, લાલ, ગુલાબી, કીરમજી, પીળો, વાદળી, રૂપેરી, જાંબુડીઓ, સફેદ, કાળો, આસમાની તથા નારંગી રંગનો પણ ઉપયોગ આ પ્રતનાં ચિત્રોમાં કરવામાં આવ્યો છે.

ચિત્ર ૩૨-૩૩ નૃત્યનાં જુદાંજુદાં સ્વરૂપો—અમદાવાદના દે૦ પા૦ ના દયાવિ૦ શાસ્ત્રસંગ્રહની કલ્પસૂત્ર તથા કાલકકથાની અપ્રતિમ કારીગરીવાળી સુવર્ણાક્ષરી પ્રતના પાના ૧૨૭ ઉપરથી.

કાગળની પ્રતના હાંસીઆમાંનાં ચિત્રો મધ્યેના નર્તના પાત્રવાળાં ચિત્રો આ વસ્તુસંકલનાનાં અપ્રતિમ પ્રતિનિધિ જેવાં છે. ચિત્રકાર બરાબર જાણે છે કે ચિત્રોમાં શું કહેવાનું છે, અને તેને અનુરૂપ તે રચના કરી શકે છે. આ ચિત્રનાં ચારે રૂપોનું એકેએક અંગ એવું તો બારીક દોરાએલું છે કે આપણી સામે જાણે તે સમયની જીવતીજાગતી ગુજરાતણો ગરબે રમતી ખડી ન કરી દીધા હોય!

ચિત્ર ૩૨-૩૩ : નૃત્યનાં જુદાંજુદાં સ્વરૂપો (પંદરમો સૈકો)

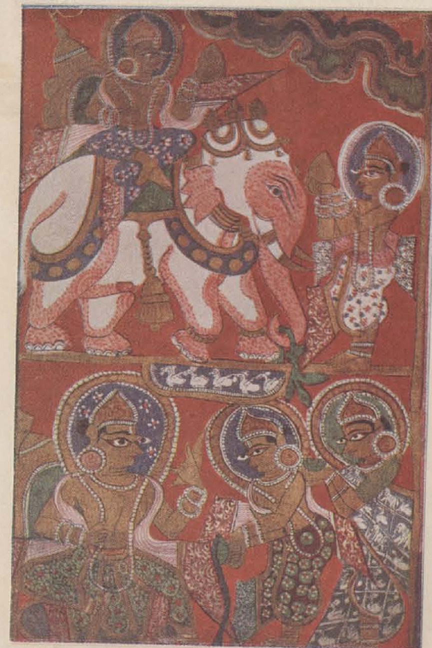

ચિત્ર ૩૪ : શ્રીઋષભદેવનો રાજ્યાભિષેક (વિ. સં. ૧૫૨૨)

ચિત્ર ૩૫ : બ્રાહ્મણી દેવાનંદા અને ચૌદ સ્વપ્ન (વિ. સં. ૧૫૨૨)

ચિત્ર ૩૪ (હંસવિ૦ ૧. પાનું ૬૦) શ્રીઋષભદેવનો (પ્રથમ રાજા તરીકે) રાજ્યાભિષેક–ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે, તેમાં ચિત્રના પરિચયની શરૂઆત નીચેના રાજ્યાભિષેકના પ્રસંગથી થાય છે. આ પ્રસંગના વર્ણન માટે મહાકવીશ્વર શ્રીધનપાલવિરચિત 'શ્રીઋષભપંચાશિકા'ના નવમા શ્લોકમાં નીચે મુજબ વર્ણન આપેલું છે:[૧૪] 'હે જગન્નાથ! ઇન્દ્ર દ્વારા જલદી રાજ્યાભિષેક[૧૫] કરાએલા એવા આપને, વિસ્મયમયપૂર્વક લાંબા કાળ સુધી કમળનાં પત્રો વડે અભિષેક-જલ ધારણ કરવા પૂર્વક જે (યુગલિકોએ) જોયા તેમને ધન્ય છે.'

ચિત્રમાં ડાબી બાજુએ સિંહાસન ઉપર શ્રીઋષભદેવ બેઠેલા છે. તેમના ઊંચા કરેલા ડાબા હાથમાં કપડા જેવું કાંઇક દેખાય છે. તેઓ પોતાની તર્જની આંગળી ઊંચી કરીને, સામે બંને હાથમાં કમળપત્રમાં અભિષેક-જલ ધારણ કરીને ઊભા રહેલા યુગલિકના એક જોડલા (સ્ત્રી-પુરુષ)ને કાંઇક કહેતા હોય એવો ભાવ દર્શાવવા ચિત્રકારે પ્રયત્ન કરેલો છે. સામે ઊભું રહેલું યુગલ નમ્ર વદને હાથના ખોબામાં કમળપત્રમાં અભિષેક-જલ ધારણ કરીને વિસ્મિત નયનોએ શ્રીઋષભદેવ સામે જોતું દેખાય છે. ચિત્રકારે કમળપત્ર બતાવવા ખાતર યુગલિક પુરુષના બંને હાથ આગળ દાંડી સાથે કમળપત્ર બતાવેલું છે. ત્રણે વ્યક્તિઓનાં કપડામાં જુદીજુદી જાતનાં શોભનો આલેખેલાં છે, જે પંદરમા સૈકાનાં સ્ત્રીપુરુષના વૈભવશાળી પહેરવેશની આબેહૂબ રજુઆત કરતા પુરાવા છે. ચિત્રના ઉપરના ભાગમાં બાંધેલા ચંદરવામાં શ્રેણીબદ્ધ પાંચ હંસ ચીતરેલા છે.

આ ચિત્રના અનુસંધાને, ઉપરના ચિત્રમાં આલેખેલો, શ્રીઋષભદેવે પોતાની રાજ્યાવસ્થામાં જગતના પ્રાણીઓના ઉપકારની ખાતર સૌથી પ્રથમ કુંભારની કળા બતાવી તે પ્રસંગ જોવાનો છે. 'શ્રીઋષભપંચાશિકા'ના ૧૦મા શ્લોકમાં આ પ્રસંગનું વર્ણન નીચે મુજબ આપેલું છે: 'જેમણે (શબ્દ વિદ્યા, લેખન, ગણિત, ગીત ઇત્યાદિ) વિદ્યા-કળાઓ અને (કુંભારાદિકનાં) શિલ્પો દેખાડ્યાં છે તેમજ જેમણે (ખેતી, પશુ-પાલન, વાણિજ્ય, લગ્ન ઇત્યાદિ) સમસ્ત (પ્રકારનો) લોકવ્યવહાર (પણ) સારીરીતે સમજાવ્યો છે, એવા આપ જે પ્રજાઓના સ્વામી થયા છો તે કૃતાર્થ છે.'—[૧૬]

શિલ્પના મુખ્ય પાંચ ભેદો છે. 'આવસ્યક-નિર્યુક્તિ'ની ગાથા ૨૦૭માં[૧૭] તેનું નીચે પ્રમાણે વર્ણન છે: 'કુંભાર, લુહાર, ચિતારો, વણકર અને નાપિત (હજામ)ના એમ પાંચ શિલ્પો મુખ્ય છે અને વળી તે પ્રત્યેકના વીસવીસ અવાન્તર ભેદો છે.'

જગતને કુંભારની કળા પ્રથમ તીર્થંકરે બતાવી હતી. (હિંદુ શાસ્ત્રમાં બ્રહ્માએ બતાવી હતી એમ કહેવામાં આવે છે.) પ્રસંગ એમ બન્યો હતો કે કલ્પવૃક્ષોનો વિચ્છેદ થવાથી લોકો કંદમૂળ અને ફલાદિક ખાતા હતા, અને ઘઉં, ચોખા ઇત્યાદિ અનાજ કાચું ને કાચું ખાતા હતા. તે તેમને પચતું નહોતું. આથી પ્રજાએ પ્રભુને વિજ્ઞપ્તિ કરી, ત્યારે હાથથી ઘસીને પાણીમાં પલાળીને અને પાંદડાના પડીઆમાં લઇને ખાવું એમ તેમણે ઉપદેશ આપ્યો. એમ કરવા છતાં પણ લોકોનું દુઃખ દૂર થયું નહિ, એટલે ફરીથી તેઓએ પ્રભુને વિજ્ઞપ્તિ કરી. પ્રભુએ કહ્યું કે મેં સૂચવ્યા મુજબ પૂર્વોક્ત

---

૧૪ धन्ना सविम्हयं जेहिं, झत्ति कयरज्जमज्जणो हरिणा ।
चिरधरिअनलिणपत्ता-भिसेअसलिलेहिं दिट्ठो सि ॥ ९॥

૧૫ આ રાજ્યાભિષેકની વિશેષ માહિતી માટે જુઓ 'આવશ્યક-ચૂર્ણિ.'

૧૬ दाविअविज्जासिप्पो, वज्जरिआसेसलोअववहारो ।
जाओ सि जाय सामिअ, पयाओ ताओ कयत्थाओ ॥ १० ॥

૧૭ पंचेव य सिप्पाइं, घड १ लोहे २ चित्त ३ णंत ४ कासवए ५ ।
इक्किक्कस्स य इत्तो, वीसं वीसं भवे भेया ॥ २०७ ॥

વિધિ કર્યા બાદ ઘઉં વગેરેને મુષ્ટિમાં અથવા બગલમાં થોડો વખત રાખ્યા બાદ ભક્ષણ કરો. આમ કરવાથી પણ તેમનું દુઃખ દૂર થયું નહિ. તેવામાં વૃક્ષની શાખાઓ પરસ્પર ઘસાતાં અગ્નિ ઉત્પન્ન થયો. આના વાસ્તવિક સ્વરૂપથી અજાણ્યા એવા તે સમયના મનુષ્યો તેને રત્ન જાણીને પકડવા ગયા; પરંતુ તેથી તો તેમના હાથ દાઝવા લાગ્યા. આથી અગ્નિને કોઇ અદ્‌ભુત ભૂત માનતા તથા તેથી ત્રાસ પામતા લોકો પ્રભુ સમક્ષ આવ્યા, ત્યારે પ્રભુએ તેમને કહ્યું કે સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ કાળનો દોષ થવાથી આ તો અગ્નિ ઉત્પન્ન થયો છે; માટે તમારે તેની પાસે જવું અને તેની સમીપમાં રહેલાં તૃણાદિકને દૂર કરી તેને ગ્રહણ કરવો, અને ત્યાર બાદ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે તૈયાર કરેલા ઘઉં વગેરેને તેમાં નાખી પકવ કરી તેનો આહાર કરવો. તે મુગ્ધ લોકોએ તેમ કર્યું એટલે ઘઉં વગેરેને તો અગ્નિ સ્વાહા કરી જવા લાગ્યો. આ વાત તેઓએ પ્રભુ સમક્ષ રજૂ કરી. આ સમયે પ્રભુ હાથી ઉપર બેઠેલા હતા. એમણે ત્યાં જ તેઓની પાસે લીલી માટીનો પિંડ મંગાવી તેને હાથીના કુંભસ્થળ ઉપર મૂકી તેનું એક પાત્ર બનાવ્યું અને એ પ્રમાણે પાત્ર બનાવી તેમાં ઘઉં વગેરે રાખી તેને અગ્નિની મદદથી પકાવી તે ખાવાની તેમને સૂચના કરી આ પ્રમાણે પ્રભુએ કુંભારના શિલ્પનો વિધિ બતાવ્યો.

ચિત્રમાં સફેદ હાથી ઉપર ઋષભદેવ બેઠા છે. તેઓશ્રીના ડાબા હાથમાં માટીનું એક પાત્ર છે, અને તે હાથ ઊંચો કરીને સામે ઊભા રહેલા યુગલિક પુરુષને તે આપવા માટે ઉત્સુકતા બતાવતા ચિત્રકારે એમને રજૂ કર્યા છે. સામે ઊભા રહેલા યુગલિક પુરુષના બંને હાથના ઊંચા કરેલા ખોબામાં પણ માટીના પાત્રની રજુઆત ચિત્રકારે કરી છે. હાથી પણ શણગારેલો છે. પ્રભુની પાછળ અંબાડીનું સિંહાસન બતાવ્યું છે અને એમના ઉત્તરાસંગનો ભાગ ઊડતો બતાવીને ચિત્રકારે છટાથી ગમન કરતા હાથીની રજુઆત કરી છે. ચિત્રની ડાબી બાજુએ ઉપરના ભાગમાં આકાશનાં વાદળો દર્શાવ્યાં છે.

ચિત્ર ૩૫ બ્રાહ્મણી દેવાનન્દા અને ચૌદ સ્વપ્ન: હંસવિ૦ ૧ ના પ્રતના પાના ૩ ઉપરથી—આખું પાનું પ્રતના મૂળ કદનું અત્રે નમૂના તરીકે રજૂ કરેલું છે.

ચિત્ર ૩૬ ચૌદ સ્વપ્ન : કાંતિવિ૦ ૧ ના પાના ૧૬ ઉપરથી—વાચકોની જાણ ખાતર એ ચૌદે સ્વપ્નનું ટૂંક વિવેચન અત્રે કરવામાં આવે છે.

(૧) હાથી–ચાર મહાન દંતુશળવાળો, ઊંચો, વરસી રહેલા વિશાળ મેઘ જેવો અને વૈતાઢ્ય પર્વતના જેવો સફેદ. તેના શરીરનું પ્રમાણ શક્રેન્દ્રના ઐરાવણ હાથીના જેવડું હતું. સર્વ પ્રકારનાં શુભ લક્ષણવાળો, હાથીઓમાં સર્વોત્તમ અને વિશાળ એવા પ્રકારનો હાથી ત્રિશલા દેવીએ પ્રથમ સ્વપ્નમાં જોયો. હાથી એ પરમ મંગળકારી તથા રાજ્યચિહ્નનો દ્યોતક છે.

(૨) વૃષભ–શ્વેત કમળની ...ડાંઓની રૂપકાંતિને પરાજિત કરતો, મજબૂત, ભરાવદાર માંસપેશીવાળો, પુષ્ટ, યથાસ્થિત અવયવવાળો અને સુંદર શરીરવાળો વૃષભ ત્રિશલાદેવીએ બીજા સ્વપ્નમાં જોયો. તેનાં અતિશય ઉત્તમ અને તીક્ષ્ણ શીંગડાંઓના આગલા ભાગમાં તેલ લગાડેલું હતું. તેના દાંત સુશોભિત અને શ્વેત હતા. વૃષભ (બળદ) એ કૃષિનો દ્યોતક છે.

(૩) સિંહ–ત્રીજા સ્વપ્નમાં ત્રિશલાએ સિંહ જોયો. તે પણ મોતીના હાર, ચંદ્રનાં કિરણ ને રૂપાના પર્વત જેવો શ્વેત રમણીય અને મનોહર હતો. તેના પંજા મજબૂત અને સુંદર હતા. પુષ્ટ અને તીક્ષ્ણ દાઢો વડે તેનું મુખ શોભી રહ્યું હતું, તેની મનોહર જીભ લપલપાયમાન થતી હતી. સાથળો વિશાળ અને પુષ્ટ હતી. સ્કંધ પરિપૂર્ણ અને નિર્મળ હતા. બારીક અને ઉત્તમ કેશવાળી વડે તે અનહદ શોભી રહ્યો હતો. તેનું પુચ્છ કુંડલાકાર અને શોભાયમાન હતું. તે વારંવાર જમીન સાથે અફળાતું અને પાછું કુંડલાકાર બની જતું. તેની આકૃતિમાં સૌમ્યભાવ દેખાઇ આવતો હતો.

ચિત્ર ૩૬ : ચૌદ સ્વપ્ન (પંદરમો સૈકો)

આવો લક્ષણવંતો સિંહ આકાશમાંથી ઊતરતો અને પોતાના મુખમાં પ્રવેશ કરતો ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ જોયો. સિંહ પરાક્રમનો દ્યોતક છે.

(૪) લક્ષ્મીદેવી–અખંડ ચંદ્રમા જેવી કાંતિવાળી લક્ષ્મીદેવીનાં ચોથા સ્વપ્નમાં દર્શન થયાં. તે લક્ષ્મીદેવી ઊંચા હિમવાન પર્વતને વિષે ઉત્પન્ન થએલ મળ રૂપી મનોહર સ્થાને બેઠેલાં હતાં. ચિત્રની મધ્યમાં મોટી આકૃતિ લક્ષ્મીદેવીની છે. તેના કમળરૂપી સ્થાનના વિશેષ વર્ણન માટે જુઓ કલ્પસૂત્ર સુબોધિકા વ્યાખ્યાન ૨ જું.

(૫) ફૂલની માળા–પાંચમા સ્વપ્નમાં ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ કલ્પવૃક્ષનાં તાજાં અને સરસ ફૂલોવાળી ચોમેર સુગંધ પ્રસરાવતી રમણીય માળા આકાશમાંથી ઊતરતી જોઈ. માળા શૃંગારની દ્યોતક છે.

(૬) પૂર્ણ ચન્દ્ર–છઠ્ઠા સ્વપ્નને વિષે ત્રિશલાએ ચન્દ્રનાં દર્શન કર્યાં. શુક્લપક્ષના પખવાડિયાની પૂર્ણિમાને પોતાની કળાઓ વડે શોભાવનાર સંપૂર્ણ ચન્દ્ર તેણે જોયો. ચન્દ્ર નિર્મળતાનો દ્યોતક છે અને બીજા પક્ષે અંધકારનો નાશક છે.

(૭) ઊગતો સૂર્ય–સાતમા સ્વપ્નમાં ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ અંધકારના સમૂહનો નાશ કરનાર અને પ્રકાશથી ઝળહળતા સૂર્યનાં દર્શન કર્યાં. સૂર્ય અતુલ પરાક્રમનો દ્યોતક છે.

(૮) સુવર્ણમય ધ્વજદંડ–આઠમા સ્વપ્નમાં ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ ઉત્તમ જાતિના સુવર્ણમય

દંડ ઉપર ફરકતી ધ્વજા જોઈ. તેના ઉપલા ભાગમાં શ્વેત વર્ણનો એક સિંહ ચીતરેલો ... ધ્વજ એ વિજયનું ચિહ્ન છે.

(૯) જળપૂર્ણ કુંભ—નવમા સ્વપ્નને વિષે ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ પાણીથી ભરેલો કુંભ જોયો. તે કુંભ (કલશ) અતિ ઉત્તમ પ્રકારના સુવર્ણ સમ અતિ નિર્મળ અને દીપ્તિમાન હતો. એમાં સંપૂર્ણ જળ ભરેલું હોવાથી તે કલ્યાણને સૂચવતો હતો. પૂર્ણ કુંભ મંગલનો દ્યોતક છે.

(૧૦) પદ્મસરોવર—દસમા સ્વપ્નને વિષે ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ પદ્મસરોવર જોયું. આખું સરોવર જુદીજુદી જાતનાં વિવિધરંગી કમળોથી તથા જળચર પ્રાણીઓથી સંપૂર્ણ ભરેલું હતું. આવું રમણીય પદ્મસરોવર દસમા સ્વપ્નમાં જોયું. સરોવર નિર્મળતાનું દ્યોતક છે.

(૧૧) ક્ષીરસમુદ્ર—અગિયારમા સ્વપ્નને વિષે ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ ક્ષીરસમુદ્ર જોયો. એ સમુદ્રના મધ્ય ભાગની ઉજ્જ્વલતા ચન્દ્રનાં કિરણ સાથે સરખાવી શકાય. ચારે દિશામાં તેનો અગાધ જળપ્રવાહ વિસ્તરી રહ્યો હતો.

(૧૨) દેવવિમાન—બારમા સ્વપ્નમાં ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ દેવવિમાન જોયું, જેના ૧૦૦૮ થાંભલા હતા. તેમાં દિવ્ય પુષ્પની માળાઓ લટકતી હતી. તેની ઉપર વરૂ, વૃષભ, ઘોડા, મનુષ્ય, પંખી, હાથી, અશોકલતા, પદ્મલતા વગેરેનાં મનોહર ચિત્રો આલેખેલાં હતાં. તેની અંદરથી મધુર સ્વરે ગવાતાં ગાયનો અને વાજિંત્રોના નાદથી વાતાવરણમાં સર્વત્ર સંપૂર્ણતા પથરાઈ જતી હતી. વળી તે વિમાનમાંથી કાલાગુરૂ, ઊંચી જાતનો કિંદુ દશાંગાદિ ઉત્તમ સુગંધી દ્રવ્યોથી ઉત્તમ મ્હેક નીકળતી હતી. આવું ઉત્તમ વિમાન તેણે જોયું.

(૧૩) રત્નરાશિ—તેરમા સ્વપ્નમાં ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ રત્નનો ઢગલો જોયો. તેમાં પુલક રત્ન, વજ્રરત્ન, ઇન્દ્રનીલ રત્ન, સ્ફટિક વગેરે રત્નો જોયાં. તે ઢગલો પૃથ્વીતળ પર હોવા છતાં કાં... વડે ગગનમંડલ સુધી દીપી રહ્યો હતો.

(૧૪) નિર્ધૂમ અગ્નિ—ચૌદમા સ્વપ્નમાં એ ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીએ ધુમાડા વગરનો અગ્નિ જોયો. અગ્નિમાં સ્વચ્છ ઘી અને પીળું મધ સીંચાતું હોવાથી તે ધુમાડા વગરનો હતો. તેની જ્વાળાઓ પૃથ્વી ઉપર રહીરહી જાણે કે આકાશના કોઇએક પ્રદેશને પકડવા પ્રયત્ન કરી રહી હોય એવી ચંચલ લાગતી હતી.

ચિત્ર ૩૭ ચંડકૌશિકને પ્રતિબોધ—દે૦ પા૦ ના દયાવિ૦ ની કલ્પસૂત્રની પ્રતની સુશોભનકળાના નમૂના તરીકે આખા પાનાનું ચિત્ર અત્રે રજુ કર્યું છે. આ આખી યે પ્રતમાં મૂળ લખાણ કરતાં ચિત્રકળાના સુશોભન શૃંગાર મુખ્ય ભાગ ભજવે છે.

મોરાક ગામથી વિહાર કરી પ્રભુ શ્વેતાંબી નગરી તરફ ચાલ્યા. માર્ગમાં ગોવાળીઆઓએ કહ્યું કે 'સ્વામી! આપ જે માર્ગે જાઓ છો તે જોકે શ્વેતાંબીનો સીધો માર્ગ છે, પણ રસ્તામાં કનકખલ નામનું તાપસોનું આશ્રમસ્થાન છે ત્યાં હમણાં એક ચંડકૌશિક નામનો દૃષ્ટિવિષ સર્પ રહે છે, માટે આપ આ સીધા માર્ગે જવાનું માંડી વાળો.' છતાં કરુણાળુ પ્રભુ, બીજા કોઇ ઉદ્દેશથી નહિ, પણ પેલા ચંડકૌશિકને પ્રતિબોધવા તે જ માર્ગે તે જ આશ્રમ ભણી ગયા.

ચંડકૌશિકનો પૂર્વ ભવ

એ ચંડકૌશિક પૂર્વ ભવમાં ઉગ્ર તપસ્વી સાધુ હતા. એક દિવસે તપસ્યાના પારણે ગોચરી વહોરવા એક શિષ્યની સાથે ગામમાં ગયા. રસ્તે તેમના પગ નીચે એક નાની દેડકી આવી ગઇ. દેડકીની થએલી વિરાધનાને પ્રાયશ્ચિત્તપૂર્વક પડિક્કમવા માટે હિતચિંતક શિષ્યે ગુરુને ઇરિયાવહી પડિક્કમતાં, ગોચરિ પડિક્કમતાં, અને સાયંકાળનું પ્રતિક્રમણ કરતાં, એમ ત્રણ વાર દેડકીવાળી વાત સંભારી આપી. આથી સાધુને ખૂબ ક્રોધ ચઢ્યો. ક્રોધમાં ને ક્રોધમાં તેઓ શિષ્યને મારવા દોડ્યા. પણ અકસ્માત એક થાંભલા સાથે અફળાતાં તપસ્વી સાધુ કાળધર્મ પામ્યા. ત્યાંથી તેઓ જ્યોતિષ્ક

ચિત્ર ૩૭ : ચંડકૌશિકને પ્રતિબોધ (પંદરમો સૈકો)

વિમાનમાં દેવ તરીકે ઉત્પન્ન થયા. ત્યાંથી ચ્યવીને તે આશ્રમમાં પાંચસો તાપસોનો સ્વામી ચંડકૌશિક નામે તાપસ થયો. તેને પોતાના આશ્રમ ઉપર એટલો બધો મોહ હતો કે કદાચ કોઈ માણસ આશ્રમનું કંઇ ફળ–ફૂલ તોડે તો તે જ વખતે ક્રોધે ભરાઈ કુહાડો લઇને મારવા દોડે. એક વખતે તે તાપસ થોડા રાજકુમારોને પોતાના આશ્રમના બાગમાંથી ફળ તોડતાં જોઈ ક્રોધે ભરાયો. કુહાડો લઇ મારવા ધસી જતો હતો, એટલામાં અચાનક કુવામાં પડી ગયો અને ક્રોધના અધ્યવસાયથી મરીને તે જ આશ્રમમાં પોતાના પૂર્વભવના નામવાળો દૃષ્ટિવિષ સર્પ થયો.

મહાવીર પ્રભુ તો આશ્રમમાં આવીને કાઉસગ્ગધ્યાને સ્થિર રહ્યા. પ્રભુને જોઇ ક્રોધથી ધમધમી રહેલો તે સર્પ, સૂર્ય સામે દૃષ્ટિ કરી, પ્રભુની તરફ દૃષ્ટિજ્વાળા ફેંકે અને રખેને પ્રભુ પોતાની પર પડે એવા ભયથી પાછો હઠી જાય. એટલું છતાં પ્રભુ તો નિશ્ચલ જ રહ્યા, આથી તેણે વિશેષ વિશેષ દૃષ્ટિજ્વાળા ફેંકવા માંડી. તથાપિ એ જ્વાળાઓ પ્રભુને તો જળધારાઓ જેવી લાગી! ત્રણ વાર દૃષ્ટિજ્વાળા છોડવા છતાં પ્રભુનું એકાગ્ર ધ્યાન તૂટવા ન પામ્યું, તેથી તે અસાધારણ રોષે ભરાયો. તેણે પ્રભુને એક સખ્ત ડંખ માર્યો. તેને ખાત્રી હતી કે મારા તીવ્ર વિષનો પ્રતાપ એટલો ભયંકર છે કે પ્રભુ હમણાં જ મૂર્છિત થઇને પૃથ્વી ઉપર પડવા જોઇએ. પરંતુ આશ્ચર્ય જેવું છે કે પ્રભુના પગ ઉપર વારંવાર ડસવા છતાં પ્રભુને તેનું લેશ માત્ર પણ ઝેર ન ચઢ્યું. ઉલટું દંશવાળા ભાગમાંથી ગાયના દૂધ જેવી રૂધિરની ધારા વહેવા લાગી.

વિસ્મય પામેલો ચંડકૌશિક સર્પ થોડી વાર પ્રભુની સન્મુખ નિહાળી રહ્યો. પ્રભુની મુદ્રામાં તેને કંઇક અપૂર્વ શાંતિ જણાઈ. એ શાંતિએ તેના દિલ ઉપર અપૂર્વ અસર કરી. તેના પોતાનામાં પણ શાંતિ અને ક્ષમા આવતાં દેખાયાં[૧૮] ચંડકૌશિકને શાંત થએલો જોઈ પ્રભુએ કહ્યું કે 'હે ચંડકૌશિક! કંઇક સમજ અને બુઝ–બોધ પામ!' પ્રભુની શાંતિ અને ધીરતાએ તેના પર અસર તો કરી જ હતી, એટલામાં પ્રભુનાં અમૃત શાં મીઠાં વેણ સાંભળતાં અને તે વિષે વિચાર કરતાં તેને જાતિસ્મરણ (પોતાના પૂર્વ ભવ સંબંધીનું) જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું. તે પોતાના ભયંકર અપરાધોનો પશ્ચાત્તાપ કરવા લાગ્યો. પ્રભુને પ્રદક્ષિણા આપતો તે મનમાં વિચાર કરવા લાગ્યો કે ખરેખર આ કરુણા-સમુદ્ર ભગવંતે મને દુર્ગતિ રૂપ મોટી ખાઇમાં પડતો બચાવી લીધો. તે જ વખતે તેણે અનશન વ્રત લઈ લીધું. રખેને પોતાની વિષમય ભયંકર દૃષ્ટિ કોઇ સદોષ કે નિર્દોષ પ્રાણી ઉપર પડી જાય એવા શુભ હેતુથી તેણે પોતાનું મસ્તક દરને વિષે છુપાવી દીધું.

આ પ્રસંગને મળતો જ કૃષ્ણના જીવનનો એક પ્રસંગ

એક વખત એક વનમાં નદીકિનારે નન્દ વગેરે સૌ ગોપો સૂતા હતા, તે વેળા એક પ્રચંડ અજગર આવ્યો. પૂર્વ જન્મમાં તે વિદ્યાધર હોઈ પોતાના રૂપના અભિમાનથી મુનિનો શાપ મળતાં અભિમાનના પરિણામ રૂપે સર્પની આ નીચ યોનિમાં જન્મ્યો હતો. તેણે નન્દનો પગ ગ્રસ્યો. બીજા બધા ગોપબાળકોનો સર્પના મુખમાંથી એ પગ છોડાવવાનો પ્રયત્ન નિષ્ફળ ગયો ત્યારે છેવટે કૃષ્ણે આવી પોતાના ચરણથી એ સર્પને સ્પર્શ કર્યો. સ્પર્શ થતાં જ એ સર્પ પોતાનું રૂપ છોડી મૂળ વિદ્યાધરના સુંદર રૂપમાં ફેરવાઇ ગયો. ભક્તવત્સલ કૃષ્ણના ચરણસ્પર્શથી ઉદ્ધાર પામેલ એ સુદર્શન નામનો વિદ્યાધર શ્રીકૃષ્ણની સ્તુતિ કરી સ્વસ્થાને ગયો.

—ભાગવત દશમ સ્કન્ધ, અ૦ ૩૪, શ્લો૦ ૫-૧૫, પૃષ્ઠ ૬૧૭-૬૧૮.

૧૮ આવી જ એક વાત બુદ્ધ વિષે જાતક નિદાનમાં છે. ઉરુવેલામાં (ભગવાન) બુદ્ધ એકવાર ઉરુવેલકાશ્યપ નામના પાંચસો શિષ્યવાળા જટિલની અગ્નિશાળામાં રાતવાસો રહ્યા જ્યાં એક ઉગ્ર આશીવિષ સર્પ રહેતો હતો. બુદ્ધે તે સર્પને જરાપણ ઇજા પહોંચાડયા સિવાય નિસ્તેજ કરી નાખવા ધ્યાન સમાધિ આદરી. સર્પ પણ પોતાનું તેજ પ્રકટાવ્યું. છેવટે બુદ્ધના તેજે સર્પતેજનો પરાભવ કર્યો. સવારે બુદ્ધે એ જટિલને પોતે નિસ્તેજ કરેલો સર્પ બતાવ્યો. એ જોઈ એ જટિલ બુદ્ધનો પોતાના શિષ્યો સાથે ભક્ત થયો.

પાનાની જમણી બાજુના ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે; તેમાં કથાના પરિચયની શરૂઆત ઉપરના ચંડકૌશિકના પૂર્વ ભવના સાધુ અવસ્થાના ચિત્રથી થાય છે. ચંડકૌશિક સાધુ બંને હાથમાં ઓઘો પકડી શિષ્યને મારવા જતા-દોડતા દેખાય છે. મારવા જતાં મસ્તક થાંભલા સાથે અંધારામાં અથડાય છે. સામે બંને હાથની અંજલિ જોડી હાથમાં ઓઘો રાખી નમ્ર ભાવે વિનયપૂર્વક દેડકીની વિરાધનાને પ્રાયશ્ચિત્તપૂર્વક પડિક્કમવા માટે ગુરુમહારાજને યાદી આપતો શિષ્ય ઊભેલો દેખાય છે. તેના પગ આગળ જ થાંભલા નજીક પ્રસંગાનુસાર ચિત્રકારે દેડકી ચીતરેલી છે. આ પછી, ચિત્રના અનુસંધાને, નીચેના ચિત્રમાં વર્ણવેલા ચંડકૌશિકના બાકીના પૂર્વ ભવોનો પ્રસંગ જોવાનો છે. ચંડકૌશિક સાધુ અવસ્થામાંથી કાળધર્મ પામી જ્યોતિષ્કવિમાનમાં દેવ તરીકે ઉત્પન્ન થએલા બતાવવા માટે અત્રે વિમાનની અંદર બેઠેલા એક દેવની આકૃતિ ચિત્રકારે ચીતરેલી છે. તેની (વિમાનની) નીચે, તે દેવલોકમાંથી ચ્યવીને ચંડકૌશિક નામે તાપસ તરીકે ઉત્પન્ન થએલા હોવાથી, તેને તાપસ સ્વરૂપે પોતાના બગીચામાંથી ફળ-ફૂલ તોડતાં રાજકુમારોને હાથમાં કુહાડો લઇને મારવા જતાં કુહાડા સાથે અચાનક કૂવામાં પડેલો ચીતરેલો છે. ત્યાંથી મરીને તે પોતે જ ચંડકૌશિક નામે દૃષ્ટિવિષ સર્પ થયો છે તે બતાવવા માટે ચિત્રકારે કાળો ભયંકર નાગ ચીતરેલો છે.

પાનાની ડાબી બાજુના ચિત્રમાં આ ચિત્રના અનુસંધાને, શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે ચંડકૌશિકને કરેલા પ્રતિબોધનો પ્રસંગ જોવાનો છે. ચંડકૌશિકના બિલ—દર આગળ જ પ્રભુ મહાવીર કાઉસગ્ગધ્યાને ઊભા છે. પ્રભુ મહાવીરના શરીરે ચિત્રકારે જે આભૂષણો પહેરાવ્યાં છે તે તેનું જૈન ધર્મ પ્રત્યેનું અજ્ઞાન સૂચવે છે, કારણકે તીર્થંકર જ્યારે સાધુપણામાં વિચરતા હોય ત્યારે, આભૂષણ વગેરેનો શ્રમણપણું—સાધુપણું અંગીકાર કરતી વખતે ત્યાગ કરેલો હોવાથી, તેમની એ સાધક-અવસ્થામાં આભૂષણો તેઓના અંગ ઉપર સંભવે જ નહિ. વર્ણનમાં તેને પ્રભુના પગે ડંખ મારતો વર્ણવેલો છે ત્યારે ચિત્રમાં પ્રભુના આખા શરીરે વીંટળાએલો તેને ચીતરેલો છે, પછીથી પ્રભુએ પ્રતિબોધ્યા બાદ પોતાનું મુખ બિલમાં નાખીને પડી રહેલો ચિત્રકારે ચીતરેલો છે. પાનાની ઉપરના સુશોભનમાં છ સુંદર હાથીઓ, નીચેના ભાગમાં પાંચ ઘોડેસવારો તથા એક પદાતિ હથીઆરોથી સુસજ્જિત થએલો, અને આજુબાજુના બંને હાંસીઆઓના ઉપરના ભાગમાં યુદ્ધ કરતા ઘોડેસવારો તથા નીચેના ભાગમાં જળભરેલી વાવો અને વાવોની અંદર સ્નાન કરતા ચાર પુરુષો ચીતરેલા છે. પાનામાં આવેલી માત્ર ચાર લીટીઓમાં ફક્ત ૧૪ અક્ષરોના લખાણ સિવાય આખું પાનું અપ્રતિમ સુશોભનકળા તથા ચિત્રકળાની રજુઆત કરે છે.

ચિત્ર ૩૮-૩૯ કલ્પસૂત્રની સુંદર કિનારો—હંસવિ૦ ૨ ના પાનાની આજુબાજુનાં જુદીજુદી જાતનાં આ સુશોભનો ફક્ત વાદળી અને સફેદ રંગથી જ ચીતરનાર ચિત્રકારોની કલ્પનાશક્તિ કોઇ અજાયબી-ભરી હોય એમ લાગે છે.

ચિત્ર ૪૦ શ્રીમહાવીરપ્રભુને સંગમદેવનો ઉપસર્ગ—પંદરમા સૈકાની હસ્તલિખિત, સુવર્ણાક્ષરી, તારીખ વગરની પ્રત ઉપરથી.

એક વખતે શક્રેન્દ્રે પોતાના અવધિજ્ઞાનથી પ્રભુને ધ્યાનમગ્ન જોઇ, તુરત સિંહાસન ઉપરથી ઊતરી પ્રભુને ઉદ્દેશી નમન કર્યું. તે પછી ઇન્દ્રે પ્રભુના ધૈર્યગુણની પ્રશંસા કરતાં પોતાની સુધર્મા સભામાં બેઠેલા દેવો સમક્ષ કહ્યું કે 'અહો! શ્રીવીરપ્રભુ કેવા ધ્યાનમગ્ન થઈ રહ્યા છે! તેમની ધીરતાની અને અડગતાની હું કેટલી સ્તુતિ કરૂં! તેમના ધ્યાનમગ્ન ચિત્તને ચલાયમાન કરવા ત્રણ જગતનાં પ્રાણીઓ કદાચ એકઠાં થાય તોપણ નિષ્ફળ જ જાય! સભામાં બેઠેલો ઇન્દ્રનો એક સામાનિક દેવ સંગમ પ્રભુની પ્રશંસા સહન ન કરી શક્યો. તે ભ્રકુટિ ચડાવી ધ્રૂજતા સ્વરમાં તાડુકી ઊઠી બોલ્યો કે 'આ દેવોની સભામાં એક પામર જનનાં વખાણ કરતાં આપને જરા યે સંકોચ નથી

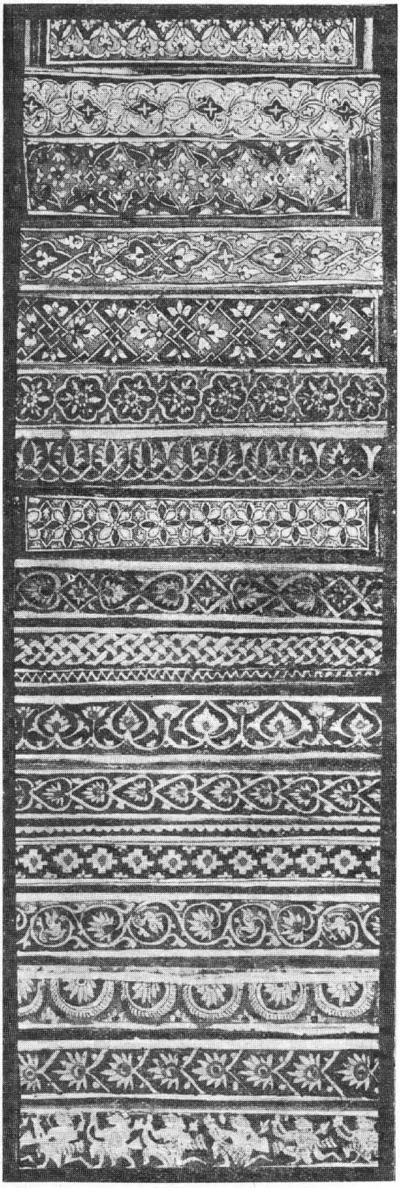

ચિત્ર ૩૮ કલ્પસૂત્રની સુંદર કિનારી (પંદરમો સૈકો) ચિત્ર ૩૯

ચિત્ર ૪૦ : શ્રી મહાવીરપ્રભુને સંગમદેવનો ઉપસર્ગ (પંદરમો સૈકો)

થતો? આપને જો વિશેષ ખાત્રી કરવી હોય તો હું પોતે જ તેને એક ક્ષણવારમાં ગભરાવી દઉં!'

ઇન્દ્રે વિચાર્યું કે જો હું ધારું તો સંગમને હમણાં જ બોલતો બંધ કરી શકું; પણ જો હું અત્યારે તેને હુકમ કરી જતો અટકાવી દઈશ તો તે દુર્બુદ્ધિ એમ સમજશે કે તીર્થંકરો તો પારકાની સહાયથી જ તપ કરે છે, અને પરિણામે એક સંગમના મનમાં નહિ પણ લગભગ બધા દેવોના મનમાં ખોટું ભૂત ભરાઈ જશે. માટે અત્યારે તો આ દુષ્ટને તેનું ધાર્યું કરવા દેવામાં જ લાભ છે.

ક્રોધથી ધમધમી રહેલો સંગમદેવ પ્રભુને ચલાયમાન કરવા ઇન્દ્ર સમક્ષ પ્રતિજ્ઞા કરી, તરત જ સભામાંથી ચાલી નીકળ્યો અને સીધો પ્રભુ પાસે આવી ઊભો રહ્યો. પ્રભુની શાંત મુખમુદ્રામાંથી શાંતિ અને કરુણાની અમીધારા ઝરતી હતી. પણ સંગમને તો તે ઉલટું જ પરિણમ્યું, કારણકે તેનું હૃદય ક્રોધ અને ઇર્ષ્યાથી ધગધગી રહ્યું હતું.

(૧) સૌથી પ્રથમ તેણે ધૂળનો વરસાદ વરસાવ્યો. (૨) તે પછી ધૂળને ખંખેરી નાખી તે દુષ્ટે વજ્ર જેવા કઠોર-તીક્ષ્ણ મુખવાળી કીડીઓ પ્રભુના શરીર ઉપર વળગાડી. તે કીડીઓએ પ્રભુનું આખું શરીર ચાળણી જેવું કરી નાખ્યું છતાં પ્રભુ અચળ જ રહ્યા. (૩) પછી પ્રચંડ ડાંસ ઉપજાવ્યા. ડાંસના તીક્ષ્ણ ચટકાથી પ્રભુના શરીરમાંથી ગાયના દૂધ જેવું રૂધિર ઝરવા લાગ્યું. (૪) વળી તીક્ષ્ણ મુખવાળી ઘીમેલો પ્રભુના શરીરે એવી તો સજ્જડ ચોંટાડી કે આખું શરીર ઘીમેલમય

થઈ ગયું. (૫) તે પછી વીંછીઓ વિકુર્વ્યા. પ્રલયકાળના અગ્નિના તણખા જેવા તે વીંછીઓએ ભગવંતના શરીરને ભેદી નાખ્યું. (૬) ત્યાર પછી નોળિયા વિકુર્વ્યા. તે 'ખી! ખી!' એવા શબ્દો કરતા દોડીદોડીને પોતાની ઉગ્ર દાઢો વડે ભગવંતના શરીરનું માંસ તોડવા લાગ્યા. (૭) પછી ભયંકર સર્પો છોડી મૂક્યા. પરમાત્મન્ મહાવીરનું આખું શરીર—પગથી માથા સુધી—સર્પોથી છવાઈ ગયું. ફણાઓ ફાટી જાય તેવા જોરથી પ્રભુના શરીર ઉપર ફણાના પ્રહારો થવા લાગ્યા, દાઢો ભાગી જાય તેટલા બળથી તે ડસવા લાગ્યા. (૮) પછી સંગમે ઉંદરો વિકુર્વ્યા. તે નખથી અને દાંતથી પ્રભુને ખણવા લાગ્યા અને તેની ઉપર પેશાબ કરીને પડેલા ઘા ઉપર ક્ષાર છાંટવા જેવું કરવા લાગ્યા. (૯) તે પછી મદોન્મત્ત હસ્તીઓ વિકુર્વ્યા. હસ્તીઓએ પ્રભુના શરીરને સૂંઢથી પકડી, અદ્ધર ઉછાળી, દંતૂશળ ઉપર ઝીલી, દાંત વડે પ્રહાર કર્યો અને પગ નીચે પણ દાબ્યા. (૧૦) હાથીથી ક્ષોભ ન થયો એટલે હાથણીઓ આવી. તે હાથણીઓએ પણ તીક્ષ્ણ દાંતથી પ્રભુને ઘણા પ્રહાર કર્યા. (૧૧) પછી અધમ સંગમદેવે પિશાચનું રૂપ ધારણ કર્યું. તે પિશાચ અગ્નિની જ્વાળાઓથી વિકરાળ બનેલા પોતાના મુખને ફાડી હાથમાં તલવાર પકડી પ્રભુની સન્મુખ ધસી આવ્યો અને અટ્ટહાસ્ય કરી ઘોર ઉપસર્ગ કર્યા. (૧૨) તે પછી નિર્દય સંગમે વાઘનું રૂપ લીધું. પોતાની વજ્ર જેવી દાઢથી અને ત્રિશૂલ જેવા તીક્ષ્ણ નહોરથી પ્રભુના આખા શરીરને તેણે વિદારી નાખ્યું. (૧૩) છતાં પણ પ્રભુને ધ્યાનમાં અચળ જોઈ સંગમે સિદ્ધાર્થ રાજા અને ત્રિશલા માતાનું રૂપ લીધું. તેઓ જાણે કરુણાજનક વિલાપ કરીને બોલવા લાગ્યા કે 'હે પુત્ર! તેં આવી દુષ્કર દીક્ષા શું કરવા લીધી? અમે ઘણાં દુઃખી થઈ આડાંઅવળાં નિરાધાર ભિખારીની જેમ રઝળીએ છીએ, તું અમારી સંભાળ કેમ નથી લેતો?' આવા વિલાપથી પણ પ્રભુ ધ્યાનમાં નિશ્ચલ જ રહ્યા. (૧૪) ત્યારે સંગમે એક છાવણી વિકુર્વી. તે છાવણીના માણસોએ પ્રભુના પગ વચ્ચે અગ્નિ સળગાવી ભાત રાંધવા પગ ઉપર વાસણ મૂક્યું. અગ્નિ એટલો બધો આકરો કર્યો કે પ્રભુના પગ નીચેથી પણ બળવા લાગ્યા. (૧૫) તે પછી એક ચાંડાલ વિકુર્વ્યો. તે ચાંડાલે પ્રભુની ડોકમાં, બે કાનમાં, બે ભુજામાં અને બે જંઘા વગેરે અવયવો ઉપર પક્ષીઓનાં પાંજરાં લટકાવ્યાં. પક્ષીઓએ ચાંચ અને નખના પ્રહારો એટલા બધા કર્યા કે પ્રભુનું શરીર પાંજરા જેવા છિદ્રવાળું થઈ ગયું. (૧૬) તે પછી પ્રચંડ પવન વિકુર્વ્યો. એ પવનથી પર્વતો પણ કંપવા લાગ્યા. પ્રભુને ઉપાડીને નીચે પટકી દીધા. (૧૭) વળી એક ભયંકર વંટોળીઓ ઉપજાવી, કુંભારના ચાકડાની ઉપર રહેલા માટીના પિંડની પેઠે પ્રભુને ખૂબ ભમાવ્યા. (૧૮) તે પછી સંગમે ક્રોધે ભરાઈને હજારભાર જેટલું વજનદાર એક કાળચક્ર વિકુર્વ્યું. તે કાળચક્ર ઉપાડી જોરથી પ્રભુના શરીર ઉપર નાખ્યું. તે ચક્ર પ્રભુના શરીર ઉપર પડવાથી તેઓ ઢીંચણ સુધી જમીનમાં પેસી ગયા. (૧૯) તે પછી કંટાળીને છેલ્લામાં છેલ્લા અનુકૂળ ઉપસર્ગો અજમાયશ કરવાનો વિચાર કરીને, રાત્રિ હોવા છતાં પ્રભાત વિકુર્વ્યું. માણસો આમતેમ ફરવા લાગ્યા અને તેઓ પ્રભુને કહેવા લાગ્યા કે 'હે દેવાર્ય! પ્રભાત થઈ ગયું છતાં આમ ધ્યાનમાં ને ધ્યાનમાં ક્યાં સુધી રહેશો? ઊઠો, આપનો ધ્યાનનો સમય તો ક્યારનો યે પૂરો થઈ ગયો.' પણ પ્રભુ તો પોતાના ધ્યાનમાં રાત્રિ ભાળી રહ્યા હતા, તેથી જરા પણ ન ડગ્યા. (૨૦) આખરે તેણે દેવઋદ્ધિ વિકુર્વી, અને વિમાનમાં બેસી પ્રભુને લલચાવવા લાગ્યો કે 'હે મહર્ષિ! હું આપનું આવું ઉગ્ર તપ અને પવિત્ર સત્ત્વ નિહાળી ભારે પ્રસન્ન થયો છું, તો આપને જે જોઈએ તે માગી લો. કહો તો આપને સ્વર્ગમાં લઈ જાઉં, કહો તો મોક્ષમાં લઈ જાઉં.' એ મીઠા શબ્દોથી પણ પ્રભુ ન લોભાયા. એટલે તેણે તત્કાળ કામદેવની સેના જેવી દેવાંગનાઓ વિકુર્વી. તે દેવાંગનાઓએ હાવભાવાદિ ઘણા ઉપસર્ગ કર્યા, પણ પ્રભુનું એક રૂંવાડું યે ન ફરક્યું તે ન ફરક્યું. એવી રીતે દુષ્ટ સંગમે એક રાત્રિમાં મોટામોટા વીસ ઉપસર્ગો કર્યા, છતાં પ્રભુએ તો તેના તરફ દયાદૃષ્ટિ જ વર્ષાવી. ધન્ય છે મહાવીરની અસીમ કરુણાને!

ચિત્ર ૪૧ : શ્રીનેમિનાથનો વરઘોડો (પંદરમો સૈકો)

ચિત્રમાં વચ્ચે મહાવીર પ્રભુ કાઉસગ્ગધ્યાને ઊભા છે. આ ચિત્રમાં આભૂષણો વગેરે જે પહેરાવેલાં છે તે ચિત્રકારની અણસમજણને આભારી છે. કપાળમાં બ્રાહ્મણનું તિલક કર્યું છે તે પણ અવાસ્તવિક છે. સાધુને કપાળમાં તિલક હોય જ નહિ. પ્રભુના મસ્તકના ઉપરના ભાગમાં બે હરણ જેવાં પ્રાણીઓ છે, પણ વર્ણનમાં હરણનો ઉલ્લેખ માત્ર પણ નથી. કાન પાસે બંને બાજુથી બંને હાથોથી પવનને આમંત્રિત કરતી બે પુરુષ વ્યક્તિઓ ઊભેલી છે. જમણી બાજુ વીંછી, વાઘ તથા છાવણીનો લશ્કરી પઠાણ સિપાઈ પ્રભુના જમણા પગ ઉપર ભાત રાંધવાનું વાસણ મૂકીને ભાત રાંધતો ઊભેલો દેખાય છે. ડાબી બાજુ સર્પ, હાથી, નોળિયો તથા ડાબા પગ ઉપર આંડાલે મૂકેલું તીક્ષ્ણ ચાંચવાળું પાંજરા વગરનું એક પક્ષી ચીતરેલું છે.

ચિત્ર ૪૧ શ્રીનેમિનાથનો વરઘોડો—કાંતિવિ૦ ૧ ના પાના ૬૩ ઉપરથી મૂળ રંગમાં સહેજ નાનું કરીને આ ચિત્ર અત્રે રજુ કર્યું છે.

લગ્નના દિવસે શ્રીનેમિકુમારને ઉગ્રસેનના ઘેર લઈ જવા તૈયાર કર્યા તેમનાં અંગ ઉપર ઉત્તમ વસ્ત્ર પહેરાવ્યાં, એક સરસ શ્વેત અશ્વ પર તેમને બેસાડ્યા, મસ્તક ઉપર એક છત્ર ધર્યું, બંને પડખે ચામર વીંઝાવા લાગ્યા અને તેમની પાછળના અશ્વોના હણહણાટથી દિશાઓ ગર્જી રહી. નેમિકુમારની પાછળ બીજા અનેક રાજકુમારો અશ્વ ઉપર સવાર થઈ ચાલવા લાગ્યા. સમુદ્રવિજયાદિ દશાર્હો, કૃષ્ણ અને બળભદ્ર વગેરે આત્મીય પરિવાર પણ સાથે ચાલવા લાગ્યો. શિવાદેવી માતા અને સત્યભામા વગેરે અંતઃપુરવાસિની સ્ત્રીઓ પણ મહામૂલ્યવાળી પાલખીમાં બેસી મંગલ ગીત ગાવા લાગી.

એટલામાં નેમિકુમારની નજર એક સફેદ મહેલ તરફ ગઈ. તેમણે પોતાના સારથિને પૂછ્યુંઃ 'મંગલના સમૂહથી શોભતો આ શ્વેત મહેલ કોનો હશે?' સારથિએ તે મહેલ તરફ આંગળી ચીંધી કહ્યુંઃ 'સ્વામી! કૈલાસના શિખર સમો એ આલિશાન મહેલ બીજા કોઈનો નહિ, પણ આપણા સસરા ઉગ્રસેન રાજાનો જ છે. અને આ સામે જે બે સ્ત્રીઓ અંદર અંદર વાતચીત કરી રહી છે તે આપની સ્ત્રી રાજીમતિની ચન્દ્રાનના તથા મૃગલોચના નામની બે સખીઓ છે.'

ચિત્રમાં નેમિકુમાર હાથી ઉપર બેઠેલા છે. તેમના મસ્તક ઉપર એક છત્ર ધરેલું છે, બે હાથમાં શ્રીફળ પકડેલું છે અને તેઓ ઉત્તમ વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત થએલા છે. સામેના મહેલના ઝરૂખામાં જમણી બાજુએ વચ્ચે ડાબા હાથમાં મુખ જોવા માટે દર્પણ લઈને બેઠેલી, વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત રાજીમતિ નેમિકુમારના સન્મુખ જોતી બેઠેલી છે. તેની પાછળ અને આગળ તેની બે સખીઓ ચન્દ્રાનના અને મૃગલોચના ઊભી છે. પાછળ ઊભી રહેલી સખી ડાબા હાથમાં કપડું પકડીને તેના છેડાથી પવન નાખી રહી છે. તેણીના ઉત્તરીય વસ્ત્રમાં હંસની ડિઝાઇન છે. સન્મુખ ઊભી રહેલી સખીના બે હાથમાં શ્રીફળ જેવી કાંઈક મંગલસૂચક વસ્તુ છે. હાથીની આગળ ચિત્રના ઉપરના તથા નીચેના ભાગમાં ભૂંગળો વગાડનારા ભૂંગળો વગાડે છે. વચ્ચે એક સ્ત્રી જમણા હાથમાં ફૂલ પકડીને નાચતી જણાય છે તથા તેની નજીક એક ઢોલી ઢોલ વગાડતો દેખાય છે. ઢોલીની પાછળ અને હાથીની પાછળ એકેક છત્ર ધરનાર માણસ છે. વળી હાથીની પાછળ બીજા ઘોડેસવાર રાજકુમારો તથા રથમાં બેઠેલા સમુદ્રવિજયાદિ દશાર્હો હોય એમ લાગે છે. ચિત્રમાં રથને બળદને બદલે ઘોડા જોડેલા છે જે ચિત્રકારના સમયના રિવાજનો ખ્યાલ આપે છે. પાનાની ડાબી બાજુના છેડે પાનાનો ૬૩ આંક છે. આ જ ચિત્ર ઉપરથી પંદરમા સૈકાના પુરુષ અને સ્ત્રીઓના પહેરવેશો, આભૂષણો, વાજીંત્રો, નૃત્ય તથા તે સમયની સમાજરચનાનો ઘણો જ સુંદર ખ્યાલ આવી શકે તેમ છે. આખું ચિત્ર સુવર્ણની શાહીથી ચીતરેલું છે. ચિત્રમાં લખાણનું

ચિત્ર ૪૨ : ભરત અને બાહુબલિ વચ્ચેનું દ્વંદ્વયુદ્ધ (વિ.સં. ૧૫૨૨)

નામનિશાન પણ નથી. વળી આ ચિત્રની પૃષ્ઠભૂમિ વાદળી રંગની હોવાથી ચિત્રનો ઉઠાવ બહુ જ મનોહર લાગે છે.

આ ચિત્રપ્રસંગ જિનમંદિરોનાં લાકડાનાં કોતરકામો તથા સ્થાપત્યકામોમાં પણ ઘણે ઠેકાણે કોતરેલો નજરે પડે છે. દેલવાડાના સુપ્રસિદ્ધ અપ્રતિમ સ્થાપત્યના ભંડાર સમા વસ્તુપાલ તેજપાલે બંધાવેલા જિનમંદિરમાં પણ આ પ્રસંગ બહુ જ બારીકીથી કોતરેલો છે. પ્રાચીન કવિઓએ આ પ્રસંગ પરથી ઉપજાવેલાં ઊર્મિકાવ્યો પણ બહુ જ મોટી સંખ્યામાં મળી આવે છે. આ પ્રસંગને લગતા એક ભિત્તિચિત્રનો ઉલ્લેખ, પાર્શ્વનાથ ભગવાનના વૈરાગ્ય પ્રસંગે, નવમા સૈકામાં થએલા શીલાંકાચાર્યે રચેલા 'ચઉપન મહાપુરુષ ચરિઅં'માં કરેલો જોવામાં આવે છે.

ચિત્ર ૪૨ હંસવિ૦ ૧ ના પાના ૬૦ ઉપરથી ભરત અને બાહુબલિ વચ્ચેના દ્વંદ્વયુદ્ધનો પ્રસંગ—આ પ્રસંગને લગતું ચિત્ર બીજી કોઇપણ પ્રતમાં હોવાનું મારી જાણમાં નથી.

ભરત અને બાહુબલિ બંને ભાઇઓ વચ્ચે બાર વર્ષ સુધી ભયંકર યુદ્ધ ચાલ્યું; પરંતુ ઘણા માણસોનો કચ્ચરઘાણ નીકળી જતો હોવાથી શક્રે તે બનેને દ્વંદ્વયુદ્ધ કરવાની સલાહ આપી, જે તેમણે માન્ય કરી. પછી શક્રે દૃષ્ટિયુદ્ધ, વાગ્યુદ્ધ, મુષ્ટિયુદ્ધ અને દંડયુદ્ધ એમ ચાર પ્રકારના યુદ્ધથી પરસ્પર લડવાનું ઠરાવી આપ્યું. એ ચારે યુદ્ધમાં આખરે બલવાન બાહુબલિનો વિજય થયો, ભરતની

હાર થઈ. ભરત મહારાજાએ પોતાની હાર થવાથી શાંતિ ગુમાવી દીધી. તેમણે એકદમ ક્રોધમાં આવી બાહુબલિનો નાશ કરવા ચક્ર છોડયું, પરંતુ બાહુબલિ સમાનગોત્રના હોવાથી તે ચક્ર કાંઈ પણ ન કરી શકયું.

બાહુબલિએ વિચાર કર્યો કે 'અત્યાર સુધી કેવળ ભ્રાતૃભાવને લીધે જ ભરતની સામે મેં આકરો ઈલાજ લીધો નથી. માટે હવે તો તેને સખતમાં સખત સજા કરવી જોઇએ. હું ધારૂં તો અત્યારે ને અત્યારે જ એક મુઠ્ઠી મારી તેના ભુક્કા ઉડાડી દઉં એમ છું.' તરત જ તેમણે ક્રોધાવેશમાં મુઠ્ઠી ઉગામી ભરતને મારવા દોટ મૂકી દોટ તો મૂકી, પણ થોડે દૂર જતાં જ બૃહસ્પતિ સમાન તેમની વિવેકબુદ્ધિએ તેમને વાર્યા. તે પુનઃ વિચારવા લાગ્યા કે 'અરેરે! આ હું કોને મારવા દોડી જાઉં છું? મોટા ભાઇ તો પિતા તુલ્ય ગણાય! તેમને મારાથી શી રીતે હણી શકાય? પરંતુ મારી ઉગામેલી આ મુષ્ટિ નિષ્ફળ જાય એ પણ કેમ ખમાય!' પણ તેઓની આ મૂંઝવણ વધારે વાર ન રહી. તેમણે એ મુષ્ટિવડે પોતાના મસ્તક પરના વાળનો લોચ કરી નાખ્યો અને સર્વસાવદ્ય કર્મ તજી દઇ કાઉસગ્ગધ્યાન ધર્યું.

ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે અને ચાર વિભાગ છે. તેમાં કથાના પરિચયની શરૂઆત ઉપરના પહેલા વિભાગના દષ્ટિયુદ્ધ અને વાગ્યુદ્ધથી થાય છે; પછી ચિત્રના અનુસંધાને અનુક્રમે બીજા વિભાગમાં મુષ્ટિયુદ્ધ ને દંડયુદ્ધ છે. ત્રીજા વિભાગમાં મુષ્ટિયુદ્ધનો પ્રસંગ જોવાનો છે. ચિત્રમાં બાહુબલિનો મુકુટ દૂર પડતો તથા તેમને મુષ્ટિથી વાળ ઉખેડતા ચિત્રકારે રજૂ કરેલા છે. ચોથા વિભાગમાં કાઉસગ્ગધ્યાનમાં સાધુ અવસ્થામાં બાહુબલિ ઊભા છે. તેઓ, છાતી ઉપર તથા બંને હાથ ઉપર લાલ રંગના જંતુઓ–ઘણું કરીને જંગલી સર્પો તથા બે ખભા ઉપર બે પક્ષીઓ અને પગના ભાગમાં ઝાડીથી વીંટળાએલા ચિત્રમાં દેખાય છે. બંને બાજુએ એકેક ઝાડ છે. ડાબી બાજુએ ઝાડની બાજુમાં તેઓની બ્રાહ્મી અને સુંદરી નામની બે સાધ્વી બહેનો હાથ જોડીને વિનતિ કરતી, માનરૂપી હાથીથી હેઠા ઊતરવા માટે સમજાવતાં કહે છે કે 'વીરા મારા ગજ થકી હેઠા ઊતરોરે, ગજે તે કેવલ ન હોય!' સાધ્વીઓની પાછળ પણ બીજાં ત્રણ ઝાડ ઊગેલાં ચિત્રકારે બતાવ્યાં છે.

ચિત્ર ૪૩ હરિણૈગમેષિન્—આ ચિત્ર સોહન૦ પાના ૧૧ ઉપરથી લેવામાં આવ્યું છે. ચિત્રમાં હરિણૈગમેષિન્ બે હાથમાં આકાશમાર્ગે ગર્ભ લઇને જતો દેખાય છે. તેના પગની નીચેના ભાગમાં પહાડની આકૃતિ તથા બંને બાજુ સુંદર ઝાડ ચિત્રકારે ચીતરેલાં છે. તેને આકાશમાર્ગે ચાલતો હોવાનો બતાવવા માટે હંસપક્ષીની ડીઝાઇનવાળા તેના ઉત્તરાસંગના છેડાને ઊડતો ચિત્રમાં બતાવેલો છે. ચિત્રકારનો આશય ગર્ભ બદલતી વખતનું દશ્ય બતાવવાનો છે.

ચિત્ર ૪૪ ત્રિશલા સિદ્ધાર્થને સ્વપ્નનો વૃત્તાંત કહે છે–આ ચિત્ર સોહન૦પ્રત ઉપરથી લેવામાં આવ્યું છે.

સિદ્ધાર્થરાજા સ્નાનગૃહમાંથી નીકળી, બહાર જ્યાં સભાનું સ્થાન હતું ત્યાં પહોંચ્યા અને સિંહાસન ઉપર પૂર્વદિશા તરફ મુખ રાખી બિરાજમાન થયા. ત્યાર બાદ પોતાનાથી બહુ નજીક નહિ તેમ બહુ દૂર નહિ એવી રીતે સભાના અંદરના ભાગમાં પડદો બંધાવ્યો. આ પડદાને વિવિધ પ્રકારનાં મણિ અને રત્નો જડેલાં હતાં. પડદાની અંદર રાણીને બેસવાનું એક સિંહાસન ગોઠવવામાં આવ્યું છે.

ચિત્રમાં સિદ્ધાર્થ રાજા જમણા હાથમાં તલવાર તથા ડાબા હાથમાં ફૂલ લઇને સિંહાસન ઉપર વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત થઈ બેઠેલા છે. મસ્તક ઉપર છત્ર લટકી રહેલું છે. વચ્ચે પડદો છે. પડદાના આંતરામાં ત્રિશલા જમણા હાથમાં ફૂલ લઇને વસ્ત્રાભૂષણોથી સુસજ્જિત થઇને બેઠાં છે. તેમના માથે ચંદરવો બાંધેલો છે. ચિત્રના ઉપરના ભાગમાં બે મોર ચીતરેલા છે.

ચિત્ર ૪૩ : હરિણૈગમેષિન્ (પંદરમો સૈકો)

ચિત્ર ૪૪ : ત્રિશલા સિદ્ધાર્થને સ્વપ્નનો વૃત્તાંત કહે છે (પંદરમો સૈકો)

ચિત્ર ૪૫ : ગર્ભના ફરકવાથી ત્રિશલાનો આનંદ (પંદરમો સૈકો)

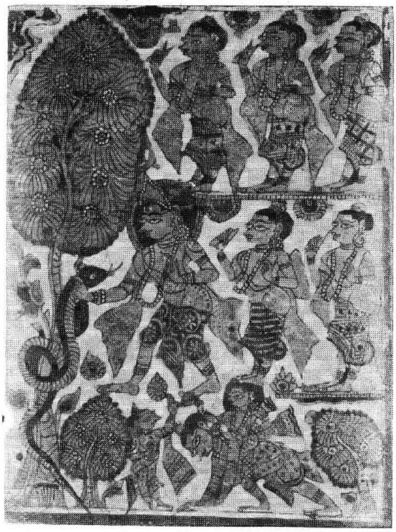

ચિત્ર ૪૬ : આમલકી ક્રીડા (પંદરમો સૈકો)

ચિત્ર ૪૫ ગર્ભના ફરકવાથી ત્રિશલાનો આનંદ—સોહન૦ પાના ૩૦ પરથી. ગર્ભ સહીસલામત છે એમ જણાતાં ત્રિશલા માતાના આનંદનો પાર ન રહ્યો. ચિત્રમાં ત્રિશલા માતા ખૂબ આનંદમાં આવી જઇને હીંચકા ઉપર બેઠેલાં છે. કલ્પસૂત્રની પ્રતનાં ચિત્રોમાં બીજી કોઇપણ પ્રતમાં આ પ્રસંગ આ રીતે ચીતરેલો જોવામાં આવ્યો નથી. હીંચકામાં સુંદર બારીક કોતરકામ કરેલું દેખાય છે. માતાની જમણી બાજુએ ચામરધારિણી સ્ત્રી ડાબા હાથથી ચામર વીંઝતી દેખાય છે. ડાબી બાજુ એક સ્ત્રી વાડકામાં ચંદન ઘનસાર વગેરે ઘસીને વિલેપન કરવા આવતી હોય એમ લાગે છે, કારણકે હીંચકાની નજીકમાં બંને બાજુ બીજી બે સ્ત્રીઓ બેઠેલી છે તે ઘણું કરીને ત્રિશલાની દાસીઓમાંની લાગે છે; વળી બીજી બે સ્ત્રીઓ હાથમાં સુખડના ટુકડાથી કાંઇક ઘસતી હોય એમ સ્પષ્ટ દેખાય છે.

ચિત્ર ૪૬ આમલકી ક્રીડા—સોહન૦ પાના ૩૪ ઉપરથી.

(૧) એક વખતે સૌધર્મેન્દ્ર પોતાની સભામાં મહાવીરના ધૈર્યગુણની પ્રશંસા કરીને કહેવા લાગ્યો કે 'હે દેવો! અત્યારના આ કાળમાં મનુષ્યલોકમાં શ્રી વર્ધમાનકુમાર એક બાળક હોવા છતાં પણ તેમના જેવો બીજો કોઇ પરાક્રમી વીર નથી. ઇન્દ્રાદિ દેવો પણ તેમને બીવડાવવાને અસમર્થ છે.' આ સાંભળીને એક દેવ કે જેનું નામ જણાવવામાં નથી આવ્યું તે જ્યાં કુમારો ક્રીડા કરતા હતા ત્યાં આવ્યો અને સાંબેલા જેવા જાડા, ચપળ બે જીભવાળા, ચળકતા મણિવાળા, ફુફાડા મારતા, કાજળ સમાન કાળા વર્ણવાળા, ક્રૂર આકૃતિવાળા અને વિસ્તૃત ફણાવાળા મોટા સર્પનું રૂપ બનાવીને ક્રીડા કરવાના વૃક્ષને વીંટાળી દીધું. આવો ભયંકર સર્પ જોઇ ભયભીત બનેલા બધા કુમારો રમત-ગમત પડતી મૂકી નાસી છૂટયા, પરંતુ મહાપરાક્રમી ધૈર્યશાળી શ્રીવર્ધમાનકુમારે જરા પણ ભય પામ્યા વિના પોતે ત્યાં તેની પાસે જઇ, સર્પને હાથથી પકડી દૂર ફેંકી દીધો. સર્પ દૂર પડ્યો એટલે નિર્ભય બનેલા કુમારો પાછા એકઠા થઇ ગયા અને ક્રીડા શરૂ કરી દીધી.

(૨) હવે કુમારોએ વૃક્ષની રમત પડતી મૂકી દડાની રમત શરૂ કરી. રમતમાં એવી શરત હતી કે જે હારી જાય તે જીતેલાને ખભા ઉપર બેસાડે. કુમારવેષધારી દેવ શ્રીવર્ધમાનકુમાર સાથે રમતાં હારી ગયો. તેણે કહ્યું કે 'ભાઇ, હું હાર્યો અને આ વર્ધમાનકુમાર જીત્યા માટે એમને મારા ખભા ઉપર બેસવા દો.' શ્રીવર્ધમાન ખભા ઉપર બેઠા એટલે દેવે તક સાધી તેમને બીવડાવવાનો પ્રપંચ કર્યો તેણે પોતાની દેવશક્તિથી સાત તાડ જેટલું પોતાનું ઊંચું શરીર બનાવ્યું. પ્રભુ તેનો પ્રપંચ અવધિજ્ઞાનબળથી જાણી ગયા. તેમણે વજ્ર જેવી કઠોર મુષ્ટિથી તેની પીઠ પર એવો તો પ્રહાર કર્યો કે તે ચીસો પાડવા લાગ્યો અને પીડા પામવાથી મચ્છરની જેમ સંકોચાઇ ગયો. પ્રભુનું પરાક્રમ તથા ધૈર્ય પ્રત્યક્ષ અનુભવી ઇન્દ્રના સત્ય વચનનો તેણે મનમાં સ્વીકાર કર્યો અને પોતાનું અસલ સ્વરૂપ પ્રકટ કરી સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો. તે વખતે ઇન્દ્રે ધૈર્યશાળી પ્રભુનું 'વીર' એવું ગુણનિષ્પન્ન નામ પાડ્યું.

ચિત્રમાં વર્ધમાનકુમારે માથે મુકુટ તથા કાનમાં કુંડળ વગેરે આભૂષણો પહેરેલાં છે અને ડાબા હાથે ઝાડને વીંટાઇ વળેલા સર્પને મોં આગળથી પકડેલો છે. વર્ધમાનકુમારની પાછળ બે તથા ઉપરના ભાગમાં ત્રણ બીજા છોકરાઓ ચીતરેલા છે. નીચેના ભાગમાં બે બાજુ બે ઝાડ ચીતરેલાં છે. વચમાં, દેવની ઉપર બેઠેલા મહાવીર, અને તેમના જમણા હાથની મુષ્ટિનો પ્રહાર સહન નહિ થવાથી કમ્મરમાંથી વળી જઇને ઘોડા જેવો બની ગએલો દેવ ચીતરેલો છે. વળી નજીકમાં એક વ્યક્તિ ઊભેલી છે જે જમણો હાથ ઊંચો કરીને કોઇને બોલાવીને મહાવીરનાં આ પરાક્રમનો પ્રસંગ બતાવતી હોય એમ લાગે છે.

આ પ્રસંગની સાથે સરખાવો શ્રીકૃષ્ણની બાળક્રીડાનો એક પ્રસંગ.

(૧) કૃષ્ણ જ્યારે બીજાં ગોપ બાળકો સાથે રમતા હતા ત્યારે તેમના શત્રુ કંસે મારવા

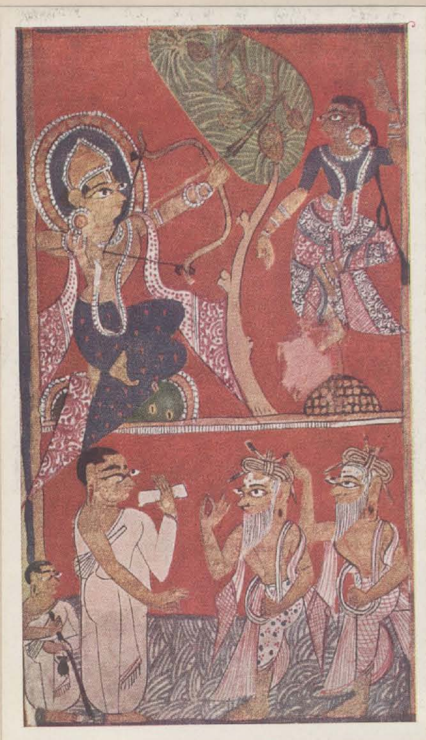

ચિત્ર ૪૭ : કોશાનૃત્ય તથા આર્યસમિતસૂરિનો એક પ્રસંગ
(વિ. સં. ૧૫૨૨)

મોકલેલો અઘ નામનો અસુર એક યોજન જેટલું સર્પરૂપ ધારણ કરી માર્ગ વચ્ચે પડ્યો અને કૃષ્ણ સુદ્ધાં બધાં બાળકોને ગળી ગયો. આ જોઈ કૃષ્ણે એ સર્પના ગળાને એવી રીતે રૂંધી નાખ્યું કે જેથી તે સર્પ અઘાસુરનું મસ્તક ફાટી શ્વાસ નીકળી ગયો અને તે મરી ગયો. તેના મુખમાંથી બાળકો બધા સકુશળ બહાર આવ્યા.

—ભાગવત દશમસ્કન્ધ, અ૦ ૧૨
શ્લો૦ ૧૨-૩૫, પૃ. ૮૮.

(૨) એકબીજાને અરસપરસ ઘોડા બનાવી જ્યારે ગોપ બાળકો સાથે કૃષ્ણ અને બળભદ્ર રમતા હતા તે વખતે કંસે મોકલેલો પ્રલમ્બ નામનો અસુર તે રમતમાં દાખલ થયો. તે કૃષ્ણ અને બળભદ્રને ઉપાડી જવા ઇચ્છતો હતો. એણે બળભદ્રના ઘોડા બની તેમને દૂર લઈ જઈ એક પ્રચંડ અને ભયાનક રૂપ પ્રગટ કર્યું. બળભદ્રે છેવટે ન ડરતાં સખત મુષ્ટિપ્રહારથી એ વિકરાળ અસુરને લોહી વમતો કરી ઠાર કર્યો અને અંતે બધા સકુશળ પાછા ફર્યા.
—ભાગવત દશમસ્કન્ધ, અ. ૨૦ શ્લો. ૧૮-૩૦

ચિત્ર ૪૭ કોશાનૃત્ય તથા આર્યસમિતસૂરિનો એક પ્રસંગ-હંસવિ૦ ૧ ના પાના ૬૮ ઉપરથી.

ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે, તેમાં ઉપરના પ્રસંગનો પરિચય 'જૈન ચિત્રકલ્પદ્રુમ' ગ્રંથમાં ચિત્ર ૨૨૨ના પરિચયમાં આપ્યો છે. ફેરફાર માત્ર, આ ચિત્રમાં રથકારની પાસે મોર નથી તેમ રથકાર ગાદી ઉપર ઘૂંટણ વાળીને બેઠેલો છે જ્યારે ચિત્ર ૨૨૨માં તે ઊભો છે એ છે. આ ચિત્રમાં આંબાનું ઝાડ બંનેની વચ્ચે ચીતરેલું છે, જ્યારે ચિત્ર ૨૨૨માં તે વેશ્યાની ડાબી બાજુ ઉપર પાછળના ભાગમાં છે. વળી ૨૨૨માં વેશ્યાએ માથે મુકુટ તથા ગળામાં ફૂલનો હાર પહેરેલો છે, જ્યારે આ ચિત્રમાં તેણીનું માથું તદ્દન ખુલ્લું છે તથા ગળામાં મોતીનો હાર પહેરેલો છે. તેણીનાં વસ્ત્રાભૂષણો આ ચિત્રમાં વધુ કિંમતી છે.

આ પછી ચિત્રના અનુસંધાને, નીચેનો આર્યસમિતસૂરિ તથા તાપસને લગતો પ્રસંગ જોવાનો છે. આભીરદેશમાં અચલપુરની નજીક, કન્ના તથા બેન્ના નામની નદીની મધ્યમાં આવેલા દ્વીપમાં બ્રહ્મદ્વીપ નામના પાંચસો તાપસો રહેતા હતા. તેમાં એક તાપસ એવો હતો કે જે પાણી પર થઈને, પોતાનો પગ ભીંજવા દીધા વિના, જમીન પર ચાલે તેવી જ રીતે, પારણાને માટે નદીની પેલી પાર ચાલ્યો જતો. તેની આવી કુશળતા જોઈને લોકોને થયું કે 'અહો! આ તાપસ કેટલો બધો શક્તિશાળી છે! જૈનોમાં આવો કોઈ શક્તિશાળી પુરુષ નહિ હોય.'

શ્રાવકોએ શ્રીવજૂસ્વામીજીના મામા શ્રીઆર્યસમિતસૂરિને બોલાવ્યા અને ઉપર્યુક્ત તાપસ સંબંધી હકીકત કહી સંભળાવી. આર્યસમિતસૂરિજીએ કહ્યું કે 'એમાં પ્રભાવ કે પ્રતાપ જેવું કાંઈ જ નથી, એ કેવળ પાદલેપ શક્તિનો જ પ્રતાપ છે.'

તે પછી શ્રાવકોએ પેલા તાપસને જમવાનું આમંત્રણ મોકલ્યું. તાપસ જમવા ઊઠ્યો એટલે તેનાં પગ અને પાવડી ખૂબ સારી રીતે ધોવડાવ્યાં. ભોજનક્રિયા પણ પૂરી થઈ. પછી તાપસની સાથે શ્રાવકો પણ નદીના કિનારા સુધી સાથે સાથે ચાલ્યા. જે લેપના પ્રતાપથી તાપસ નદીનાં પાણી ઉપર થઈને ચાલી શકતો હતો તે લેપ ધોવાઈ ગએલો હતો, છતાં જાણે કાંઇ બન્યું જ નથી એવી ધૃષ્ટતા સાથે તાપસે નદીમાં ઝુકાવ્યું. નદીમાં પગ મૂકતાં જ તે ડૂબવા લાગ્યો અને સૌ-કોઇ તેની મશ્કરી કરવા લાગ્યા.

એટલામાં આર્યસમિતસૂરિજી ત્યાં પધાર્યા. તેમણે લોકોને કેવળ ખરી વસ્તુસ્થિતિનું ભાન કરાવવા માટે પોતાના હાથમાંનું યોગચૂર્ણ (વાસક્ષેપ) નદીમાં નાખ્યું અને કહ્યું કે 'હે બેન્ના! મને પેલે પાર જવા દે.' એટલું કહેતાં જ નદીના બંને કાંઠા મળી ગયા! સૂરિજીની આવી અદ્દભુત શક્તિ જોઈ લોકો ભારે આશ્ચર્ય પામ્યા. પછી તેમણે તાપસોના આશ્રમમાં જઇ તેમને પ્રતિબોધ્યા અને દીક્ષા આપી.

ચિત્રમાં જમણી બાજુએ ઊભેલા નાના સાધુ તે વજ્રસ્વામીજી છે અને તેમની સાથે જમણા બગલમાં ઓઘો રાખીને હાથમાંનું યોગચૂર્ણ નાખતા તથા ડાબા હાથમાં મુહપત્તિ રાખીને ઊભા રહેલા શ્રીઆર્યસમિતસૂરિજી છે. સામે બે તાપસો પૈકી એક જમણા હાથની તર્જની આંગળી તથા અંગુઠાને ભેગા કરીને તથા બીજો જમણો હાથ ઊંચો રાખીને સૂરિજીની આવી અદ્દભુત શક્તિ જોઇ વિસ્મિત–આશ્ચર્યમુગ્ધ થએલા દેખાય છે. તાપસોના માથે જટા તથા કપાળમાં ત્રિપુંડ-તિલક પણ સ્પષ્ટ દેખાય છે. બાજુમાં બેન્ના નદીનું પાણી વહેતું ચિત્રકારે બતાવીને ચિત્ર મધ્યેની બધી આકૃતિઓ નદીના તટ પર જ ઊભી છે એમ બતાવવા પ્રયત્ન કર્યો છે.

ચિત્ર ૪૮ કોશાનૃત્ય–આ પ્રસંગના વર્ણન માટે પણ જુઓ ચિત્ર ૨૨૩નું આ પ્રસંગને લગતું વિસ્તૃત વર્ણન. આ ચિત્ર 'જૈનચિત્ર–કલ્પદ્રુમ'ના ચિત્ર **૧૯૬** અને ૨૨૨ બંને કરતાં જુદી જ નવીનતા રજૂ કરે છે. ચિત્ર ૨૨૨ માં રથકારના પગ આગળ કળાનો તથા વસંતઋતુનો પ્રસંગ દર્શાવવા એકલો મોર જ ચીતરેલો છે, જ્યારે પ્રસ્તુત ચિત્રમાં રથકારના મસ્તકના ઉપરના ભાગમાં વસંતના આગમનને સૂચવતી પંચમ સ્વરે ગાતી કોયલ તથા તેની ધોતીમાં પણ કોયલોની ડીઝાઇન ચીતરેલી છે. વળી આ ચિત્રમાં સરસવના દગલા અને સોયને બદલે એકલું ફૂલ જ રજૂ કરેલું છે. કોશા નર્તકીનો અભિનય તથા પગનો ઠમકો કોઈ અલૌકિક પ્રકારનો છે. બંનેના મસ્તક ઉપરના મુકુટો વળી ગુજરાતના કોઇપણ પ્રાચીન ચિત્રમાં નહિ જોવામાં આવતા જુદા જ પ્રકારના જણાય છે. કદાચ આ ચિત્રવાળી પ્રત, ગુજરાતના સાહસિક વ્યાપારીઓ જાવા વગેરે ટાપુઓમાં વ્યાપારાર્થે જતા તે સમયે ત્યાંના કોઈ ચિત્રકાર પાસે ચીતરાવી લાવ્યા હોય એમ લાગે છે, કારણકે ચિત્ર ચીતરવાની ઢબ ગુજરાતના પ્રાચીન ચિત્રકારોની જ છે છતાં પહેરવેશ તે બાજુના કોઇ પ્રદેશનો છે. વળી આમ્રવૃક્ષનાં પાંદડાં પણ આ ચિત્રમાં વધુ સ્પષ્ટ દેખાય છે.

ચિત્ર ૪૯ આર્યસ્થૂલભદ્ર અને યક્ષાદિ સાત સાધ્વી બહેનો–આ ચિત્રમાં સાધુ તથા સાધ્વીઓનો પહેરવેશ બીજાં ચિત્રો કરતાં તદ્દન જુદી જ રીતનો છે. બંનેનો પહેરવેશ બૌદ્ધ સાધુઓના પહેરવેશને મળતો આવે છે. આખું યે ચિત્ર મૂળ સુવર્ણની શાહીથી ચીતરેલું છે. આ પ્રસંગના વિસ્તૃત વર્ણન માટે જુઓ 'જૈન ચિત્ર-કલ્પદ્રુમ'માં ચિત્ર ૨૨૩ નું વર્ણન. બંનેમાં ફેરફાર માત્ર જૂજ છે. ચિત્ર ૨૨૩માં સામાન્ય સિંહ ચીતરેલો છે, જ્યારે આ ચિત્રમાં બે દાંતવાળો અને પરાક્રમી વેગવાન સિંહ

ચિત્ર ૪૮ : કોશાનૃત્ય

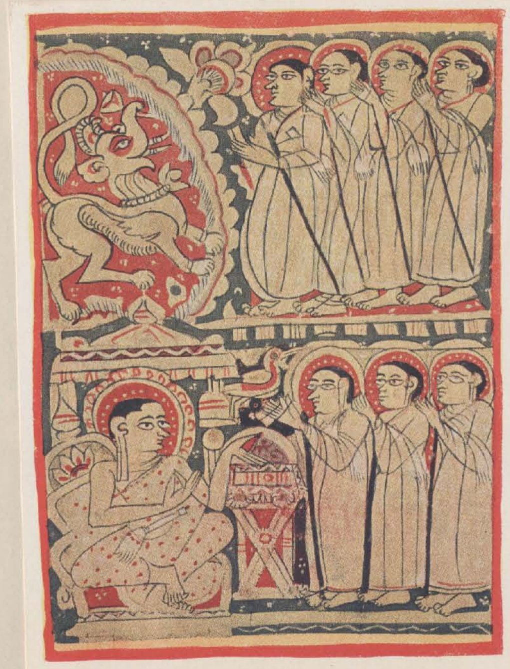

ચિત્ર ૪૯ : આર્યસ્થૂલભદ્ર અને યક્ષાદિ સાત સાધ્વી બહેનો

(પંદરમો સૈકો)

ચિત્ર ૫૦ : ભગવાન મહાવીરની દીક્ષા (પંદરમો સૈકો)

સુંદર રીતે ચીતરેલો છેઃ ચિત્ર ૨૨૩માં ઉપર અને નીચે બબ્બે સાધ્વીઓ ચીતરીને ચારની રજૂઆત કરેલી છે, જ્યારે આ ચિત્રમાં સાત સાધ્વીઓ ચીતરેલી છે. દરેકના મસ્તકની પાછળ બૌદ્ધ ભિક્ષુઓનાં પ્રાચીન ચિત્રોમાં દિવ્યતેજ (ભામંડલ) બતાવવા સફેદ ગોળ આકૃતિ મૂકવામાં આવે છે તેવી જ રીતે આ ચિત્રમાં દરેક આકૃતિની પાછળ તેની રજૂઆત કરવામાં આવી છે. વળી વધારામાં નીચેના પ્રસંગમાં સ્થાપનાચાર્ય, સાધુના માથે છત્ર તથા છત્રની પાસેથી ઊડતી એક કોયલ ચીતરી છે, જેની રજૂઆત ચિત્ર ૨૨૩માં બીલકુલ દેખાતી નથી.

ચિત્ર ૫૦ ભગવાન મહાવીરની દીક્ષા-ચિત્રમાં ઉપર અને નીચે એમ બે પ્રસંગો છે. તેમાં કથાના પરિચયની શરૂઆત નીચેના પાલખીના ચિત્રથી થાય છે. 'પચાસ ધનુષ્ય લાંબી, પચ્ચીસ ધનુષ્ય પહોળી, છત્રીસ ધનુષ્ય ઊંચી, સુવર્ણમય સેંકડો સ્તંભોથી શોભી રહેલી અને મણિઓ તથા સુવર્ણથી જડિત, એવી 'ચંદ્રપ્રભા' નામની પાલખીમાં પ્રભુ (મહાવીર) દીક્ષા લેવા નિસર્યા.

તે સમયે હેમંત ઋતુનો પહેલો મહિનો માગશર માસ, પહેલું પખવાડિયું કૃષ્ણપક્ષ અને દશમની તિથિ હતી. તે વેળા તેમણે છઠ્ઠનો તપ કર્યો હતો અને વિશુદ્ધ લેશ્યાઓ વર્તતી હતી. પ્રભુના જમણે પડખે કુલની મહત્તરા સ્ત્રી હંસલક્ષણ (કાપડની જાતિવિશેષ) ઉત્તમ સાડી લઇને બેઠી હતી. ડાબે પડખે પ્રભુની ધાવમાતા દીક્ષાનાં ઉપકરણ લઇને બેઠી હતી. સર્વ પ્રકારની તૈયારી થઈ રહ્યા પછી નંદિવર્ધનની આજ્ઞાથી તેના સેવકોએ પાલખી ઉપાડી.' આ પછી ચિત્રના અનુસંધાને, ઉપરના ચિત્રમાં વર્ણવેલો પ્રભુ મહાવીરે કરેલો અનગારપણા (સાધુવ્રત) ના સ્વીકારનો પ્રસંગ જોવાનો છે. 'અશોક વૃક્ષ (આસોપાલવ નહિ)ની હેઠળ આવી પ્રભુ નીચે ઊતર્યા અને પોતાની મેળે જ આભૂષણો ઉતારવા લાગ્યા. સર્વ અલંકારોનો ત્યાગ કર્યા પછી, શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે પોતાની મેળે જ એક મુષ્ટિ વડે દાઢીમૂછનો અને ચાર મુષ્ટિ વડે મસ્તકના કેશનો એવી રીતે પંચમુષ્ટિ લોચ કર્યો. એ વેળા નિર્જળ છઠ્ઠનો તપ તો હતો જ. ઉત્તર ફાલ્ગુની નક્ષત્ર સાથે ચંદ્રનો યોગ થયો ત્યારે ઇન્દ્રે ડાબા ખભા ઉપર સ્થાપન કરેલું દેવદૂષ્ય વસ્ત્ર ગ્રહણ કરીને,

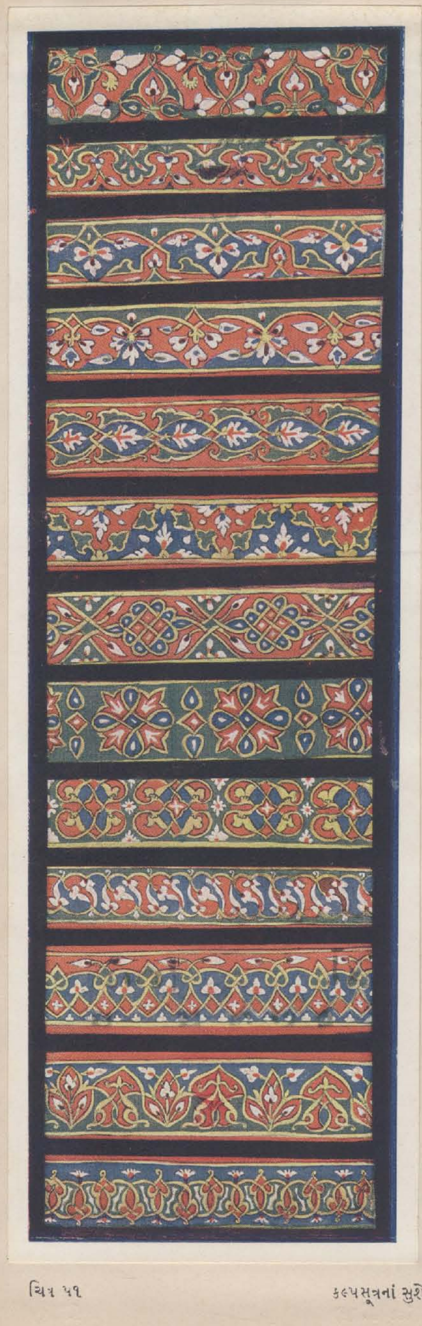

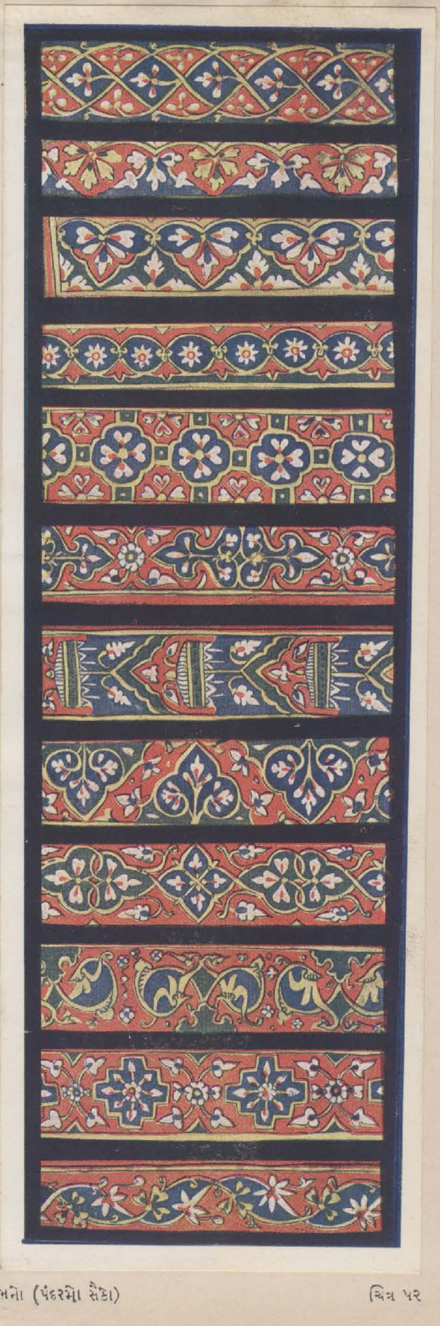

ચિત્ર ૫૧ કલ્પસૂત્રનાં સુશોભનો (પંદરમો સૈકો) ચિત્ર ૫૨

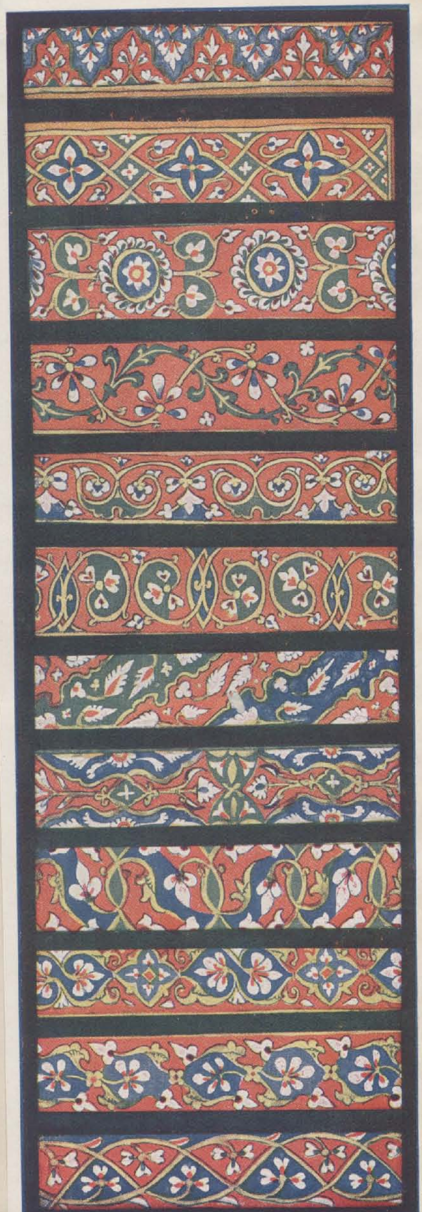

ચિત્ર ૫૩ કલ્પસૂત્રનાં સુશોભનો (પંદરમો સૈકો) ચિત્ર ૫૪

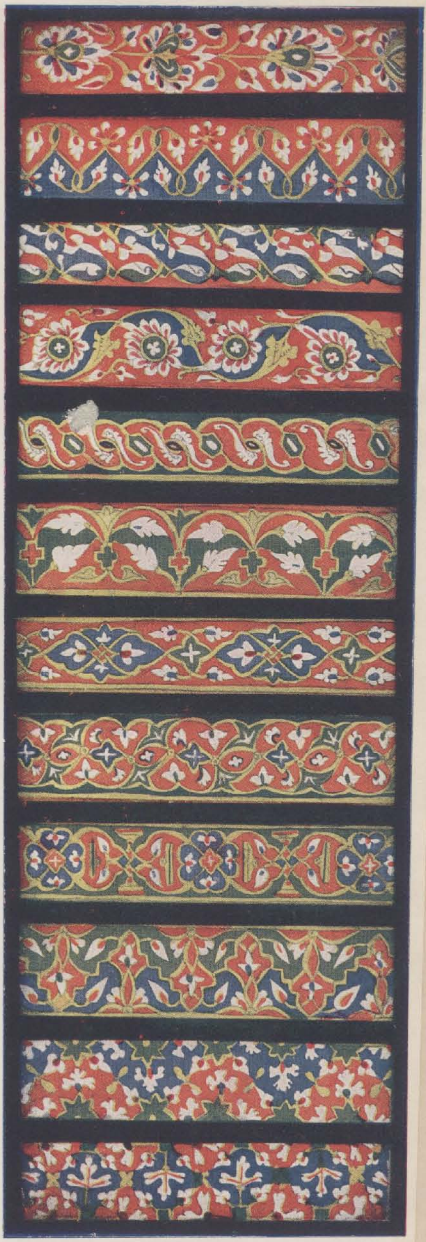

ચિત્ર ૫૫ કલ્પસૂત્રનાં સુશોભનો (પંદરમો સૈકો) ચિત્ર ૫૬

ચિત્ર ૫૭–૫૮ : બાલગોપાલ સ્તુતિના ચિત્રપ્રસંગો (પંદરમો સૈકો)

એકલા એટલે રાગદ્વેષરહિતપણે, કેશનો લોચ કરવારૂપ દ્રવ્યથી અને ક્રોધાદિને દૂર કરવારૂપ ભાવથી મુંડ થઇને, ગૃહવાસથી નીકળી તે અનગારપણાને–સાધુપણાને પામ્યા.'

ચિત્ર ૫૧ થી ૫૬ કલ્પસૂત્રનાં સુશોભનો–હંસવિ० ૧ ની પ્રતમાંથી સુશોભનકળાના નમૂના તરીકે થોડાંક શોભનો અત્રે મૂળ રંગમાં રજુ કરેલાં છે. સુશોભનકળાના તે અદ્વિતીય નમૂના છે.

ચિત્ર ૫૭ કૃષ્ણની ગોપીઓ સાથે ક્રીડા–'બાલગોપાલ સ્તુતિ'ની પ્રતના પાના ૪૦ ઉપરથી. પાનાના લખાણને જ ચિત્રકાર અનુસર્યો હોય એમ લાગે છે.

गोपीभिरास्त्राद्य मुखं विमुंक्तः (मुक्तः)
शेते स्म रात्रौ सुखमेव केशवः।
स्तनांतरेष्वेव बभुव तासां
कामीव कान्ताधरपल्लवं पिबन् ॥ ८ ॥
मधुरमधु(ध)रबिंबं प्राप्नुवत्यां भवत्यां
कथय रहसि कर्णे मद्दि(दृ)शां नंदसूनोः।
अयि मरुलि मुकुंदस्मेरवक्त्रारवि(विं)दात्
श्रवणनिचय धूम्रे (स्वरपरिचय नम्रे) संप्रति प्राणनाथे ॥९॥

ભાવાર્થઃ ગોપીઓના મુખનો આસ્વાદ લઇને છુટો થએલો, અધરપલ્લવનું પાન કરતો (હોય) એવો કેશવ રાત્રિમાં તેણીઓના જ સ્તનાંતરોને વિષે (વક્ષસ્થળ ઉપર) કામી જેમ સુખ-પૂર્વક સૂઈ ગયો.—૮

હે મોરલી! પ્રાણનાથ (કૃષ્ણ) સ્વરનો પરિચય કરવા તત્પર અને તે વખતે, તું મુકુંદના પ્રસન્ન મુખકમળથી, અધરબિંબ-ઓષ્ટપુટ પાસે જાય ત્યારે, એકાંતમાં નંદસૂનુ-કૃષ્ણના કાનમાં મારી દશાને–અવસ્થાને કહેજે.–૯

ચિત્રમાં શયનમંદિરમાં હીંચકા ઉપર કૃષ્ણ એક ગોપી સાથે સૂતેલા અને તેના અધરપલ્લવનું પાન કરવા માટે ઉત્સુકતા બતાવતા દેખાય છે. બંને બાજુ એકેક ગોપી હીંચકા ઉપર સૂઈ રહેલા કૃષ્ણ અને ગોપીને હીંચકા નાખતી દેખાય છે. શયનમંદિરની છતમાં ચંદરવો બાંધેલો છે. ચિત્રકારે પ્રસંગને તાદૃશ્ય ચિત્ર આલેખેલું છે.

ચિત્ર ૫૮ કૃષ્ણ અને ગોપીઓની વનક્રીડા.—ઉપર્યુક્ત પ્રતના પાના ૪૩ ઉપરથી—આ ચિત્રનો પ્રસંગ અને લખાણ બંને જુદાં પડે છે.

अहं परं वेद्मि न वेत्ति तत्परात्(रा)
स्मरोत्सुकानामपि गोपसुभ्रुवां
अभूदहंपूर्विकया महान् कलि-
र्बलिद्विषः केशकलापगुम्फने ॥२२६॥
भ्रमद्भ्रमरकुंतलारचितलोललीलालिकं
कलक्वणितकिङ्किणी ललितमेखलाबन्धनं ।
(ग)
कपोलफलकस्फुरत्कनककुंडलं तन्महो
मम स्फुरतु मानसे मदनकेलिशय्यो[त्सुकं]।

ભાવાર્થઃ ગોપાલ–કૃષ્ણના વાળ ઓળવામાં કામથી વિહ્વલ બનેલી ગોપીઓનો આપસમાં 'હું જ ઉત્કૃષ્ટ–સારીરીતે (વાળ ઓળવાનું) જાણું છું, બીજી જાણતી નથી' આ પ્રમાણે ચડસાચડસીથી ખૂબ ઝગડો જામ્યો.—૨૨૬

ભમતા ભ્રમરો જેવા કેશથી છવાએલા કપાળવાળું, અને મધુર અવાજ કરતી ઘુઘરીઓવાળી કટિમેખલાવાળું અને ગંડસ્થલ ઉપર ઝગક ઝગક થતા કુંડલવાળું શય્યાવિષે રતિક્રીડામાં તત્પર તે (શ્રીકૃષ્ણ રૂપી) જ્યોતિ મારા હૃદયમાં સ્ફુરો.

ચિત્રની મધ્યમાં કૃષ્ણ કમળ ઉપર અદ્ધર નાચતા દેખાય છે. તેમના પગ નીચે કમળ છે. કૃષ્ણની જમણી બાજુ એક ગોપી ડાબા હાથથી ચામર વીંઝતી ઊભી છે. ડાબી બાજુએ બે ગોપીઓ ઊભી છે, તેમાંની પહેલી ગોપી તરફ કૃષ્ણ જુએ છે અને તેની સાથે કાંઇક વાત કરતા હોય એમ લાગે છે. ઘણું કરીને આગળની ગોપી કૃષ્ણની માનીતી ગોપી રાધા હોવી જોઇએ. તેણી જમણા હાથની તર્જની આંગળી અને અંગુઠો ભેગો કરીને કૃષ્ણને નાચતા જોઇ તેમની મશ્કરી કરતી હોય એમ લાગે છે. ચિત્રમાં ત્રણ જુદીજુદી જાતનાં ઝાડ ચીતરેલાં છે. રાધાની પાછળના ભાગમાં બીજી એક ગોપી જમણો હાથ ઊંચો રાખીને હાથના વાસણમાં કંઈ લઈ જતી હોય એમ લાગે છે. આ પ્રતનાં ચિત્રોમાં તથા 'જૈન ચિત્ર-કલ્પદ્રુમ'ના ચિત્ર ૨૫૨ અને ૨૫૪માં જે જાતનાં ઝાડ છે તે જ જાતનાં ઝાડો વિ. સં. ૧૫૦૮માં લખાએલા 'વસંત વિલાસ'ના ચિત્રપટમાં પણ રજૂ કરેલાં છે, તેથી આ પ્રત તેની સમકાલીન હોવાની સંભાવના છે.

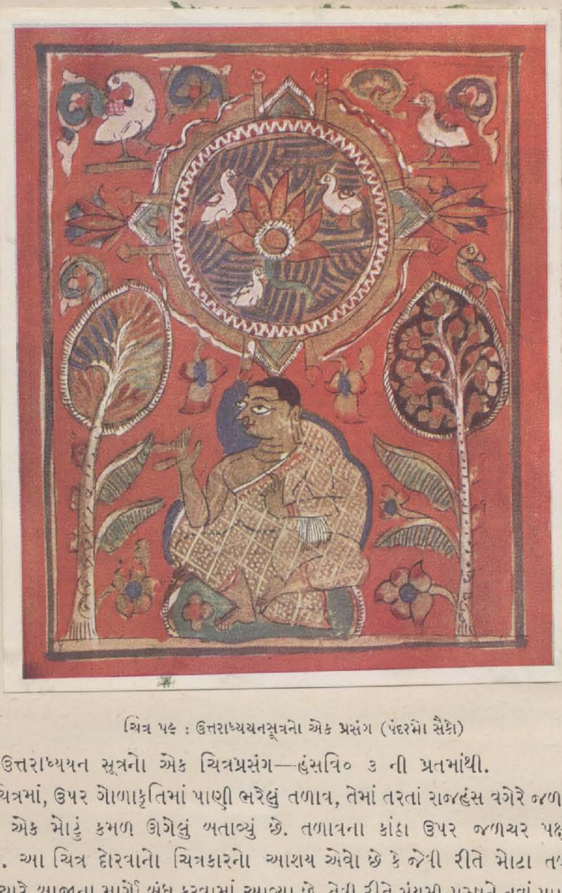

ચિત્ર ૫૯ : ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રનો એક પ્રસંગ (પંદરમો સૈકો)

ચિત્ર ૫૯ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનો એક ચિત્રપ્રસંગ—હંસવિ૦ ૩ ની પ્રતમાંથી.

ચિત્રમાં, ઉપર ગોળાકૃતિમાં પાણી ભરેલું તળાવ, તેમાં તરતાં રાજહંસ વગેરે જળચર પક્ષીઓ અને વચ્ચે એક મોટું કમળ ઊગેલું બતાવ્યું છે. તળાવના કાંઠા ઉપર જળચર પક્ષીઓ ફરતાં બતાવ્યાં છે. આ ચિત્ર દોરવાનો ચિત્રકારનો આશય એવો છે કે જેવી રીતે મોટા તળાવનાં જળ આવવાના ચારે બાજુના માર્ગો બંધ કરવામાં આવ્યા છે, તેવી રીતે સંયમી પુરુષને નવાં પાપ આવવાનાં દ્વારો વ્રતદ્વારા રૂંધાઇ જવાથી બાકી રહેલાં પહેલાંનાં બંધાએલાં કર્મો તપદ્વારાએ શોષાઇ જાય છે. તે એવી રીતે કે જેમ જળ આવવાના માર્ગો બંધ કર્યા પછી તળાવની અંદરનું પાણી સૂર્યના પ્રચંડ તાપથી શોષાઇ જાય છે તેમ. વળી ચિત્રમાં નીચેના ભાગમાં સાધુની આજુબાજુ બે ઝાડો જુદીજુદી જાતનાં ચિત્રકારે ચીતર્યાં છે. તે ચીતરવાનો આશય પણ ઉપરની કલ્પનાને મળતો હોય એમ લાગે છે. ઝાડ જેવી રીતે જળ વગેરેનાં સીંચનથી આવડાં મોટાં ઊગેલાં છે, તેવી જ રીતે સંયમી પુરુષ પણ કર્મોથી બંધાતોબંધાતો ઉમરલાયક થાય છે; પરંતુ જેમ વૃદ્ધિ પામેલા ઝાડને પણ જો જળસીંચન વગેરે કરવામાં ન આવે તો આખરે તે સૂર્યના તાપથી કરમાઇને નાશને પામે, તેવી રીતે જ સંયમી પુરુષને નવાં કર્મો આવવાનો રસ્તો બંધ થવાથી જૂનાં કર્મોનો નાશ તપશ્ચર્યા વગેરે ક્રિયાઓથી થઇ જાય તો અંતે સર્વ પાપકર્મોથી મુકાઇને તે મોક્ષસુખને પામે. ઝાડ ચીતરવાનો ચિત્રકારનો આશય આ બતાવવાનો હોય એમ લાગે છે.

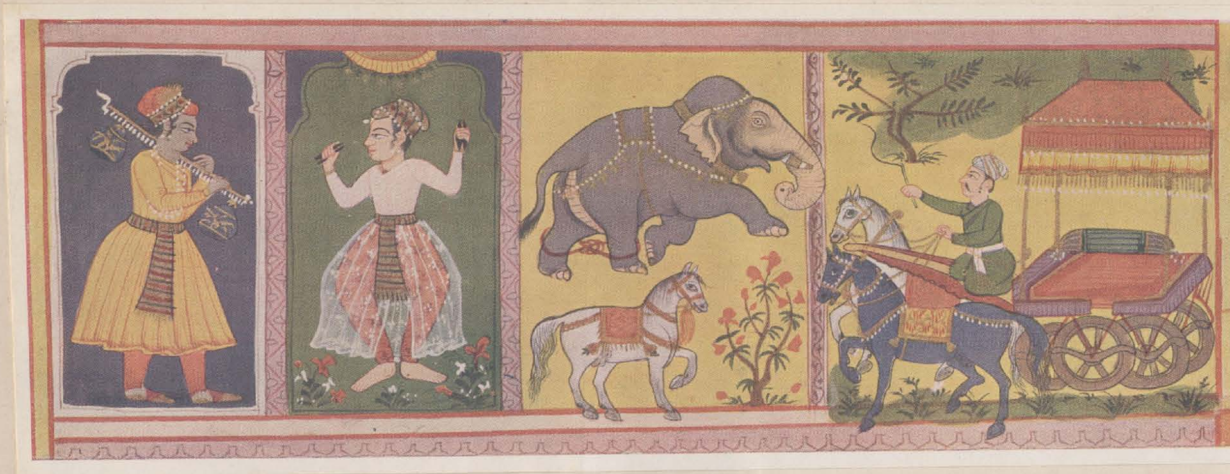

ચિત્ર ૬૦ : દેવોનું કટક (સત્તરમો સૈકો)

ચિત્ર ૬૧ : શ્રીપાલ રાસમાંથી એક વહાણ (ઓગણીસમો સૈકો)

ચિત્ર ૬૦ દેવોનું કટક.

गंधव्व नट्ट हय गय, रह भड अणियाणि सव्व इंदाणं ।
माणियाण वसहा, महिसाय अहोनिवासीणं ॥ ४५ ॥

ભાવાર્થ: ૧.ગંધર્વ–ચિત્રમાં જમણા ખભા ઉપર તંબુરો રાખીને ઊભો રહેલો છે; તે ૨ નટ્ટ–ચિત્રમાં બે હાથમાં મંજીરાં રાખીને વગાડતો તથા નાટક કરતો દેખાય છે તે; ૩ ઘોડો–ચિત્રમાં આગળનો ડાબો પગ ઊંચો રાખીને ઊભેલો છે તે; ૪ હાથી–ચાલતો હાથી ચિત્રમાં ચીતરેલો છે, જેના પાછલા બે પગ બાંધેલા છે તે; ૫ રથ–ચિત્રમાં મોગલ સમયનો રથ તેના હાંકનાર સહિત ચીતરેલો છે તે.

રથને બે ઘોડા જોડેલા છે જેમાંનો એક સફેદ અને એક કાળો છે. આ ચિત્રમાં ઉપર મુજબનું દેવોના સાત કટકમાંથી પાંચ કટકનું આલેખન આપેલું છે. તે સિવાય છઠ્ઠું કટક સુભટ અને ૭મું કટક વૃષભ અથવા પાડો હોય છે. વૈમાનિકને વૃષભ અને ભવનપતિને પાડો હોય છે. એ બંનેનાં ચિત્રો પાનાની પાછળની બાજુ ઉપર હોવાથી અત્રે આપ્યાં નથી.

ચિત્ર ૬૧ શ્રીપાલ રાસમાંથી એક વહાણ: શ્રીપાલ રાસની પ્રતના પાના ૪૫ ઉપરથી—આ વહાણને રાસકાર શ્રીવિનયવિજયજીએ જુંગ જાતિના વહાણ તરીકે ઓળખાવ્યું છે. તેનું વર્ણન કરતાં તે જણાવે છે કે 'જેને જોતાં જ અચંબો થાય તેવું એક જુંગ જાતિનું વહાણ, કે જેના થંભોને કારીગરોએ સુંદર ઘડેલા તથા મણિમાણેકોથી જડેલા; અને તે આકાશને જઈ અડયા હોય એટલા ઉંચાઈમાં છે; તેમજ તે વહાણની અંદર સોનેરી શાહીથી ચીતરેલાં મનોહર ચિત્રામણોવાળા ગોખ ઠેકાણે ઠેકાણે જોવામાં આવે છે અને તે વહાણને માથે સુંદર ધ્વજાઓ ફરકી રહેલી છે; તેમજ તેમાં તરેહ-તરેહનાં મનહર વાજીંત્રો વાગી રહ્યાં છે કે જેના શબ્દો વડે તે વહાણ સમુદ્રની અંદર ગાજી રહ્યું છે.

ચિત્ર ૬૨ : દેવોની ઉત્પત્તિશય્યા (સત્તરમો સૈકો)

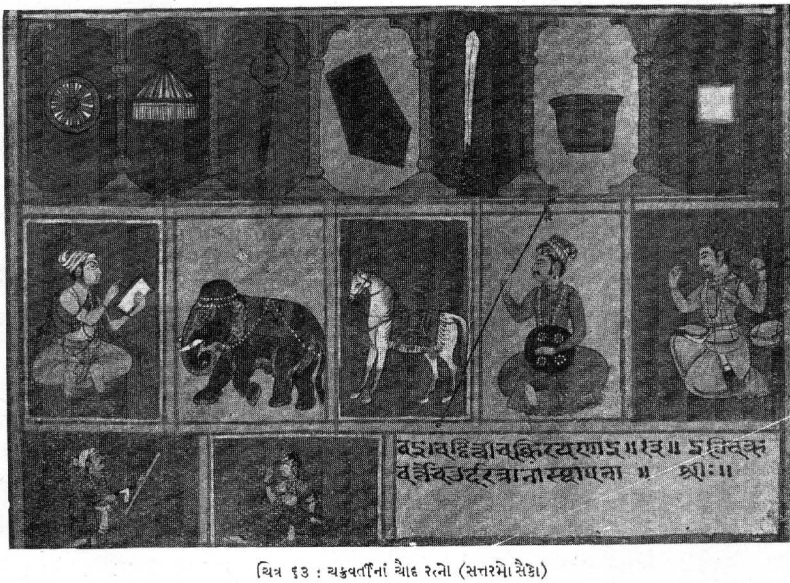

ચિત્ર ૬૩ : ચક્રવર્તીનાં ચૌદ રત્નો (સત્તરમો સૈકો)

ચિત્ર ૬૨ દેવોની ઉત્પત્તિ-શય્યા—આ શય્યામાંથી દેવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. અર્થાત્ જેમ મનુષ્યની ઉત્પત્તિ માતાની કુક્ષિમાંથી ગર્ભપણે થતી જોવાય છે તે પ્રમાણે દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થવાની ઉત્પત્તિ શય્યા હોય છે. તેની ઉપર દેવદૂષ્ય વસ્ત્ર ઢાંકેલું હોય છે અને તે દેવદૂષ્ય વસ્ત્રની નીચેથી દેવની ઉત્પત્તિ

થાય છે અને એથી જ એને 'સંવૃત યોનિ' કહે છે. અંતર્મુહૂર્તમાં તેમાંથી તરુણ દેવ ઉત્પન્ન થાય છે (જુઓ ચિત્રની ડાબી બાજુએ) અને ઉત્પન્ન થયા બાદ (ચિત્રની જમણી બાજુએ) સાથે જ બતાવેલ ઉપપાત સભામાં જઇ તે દેવયોગ્ય પ્રાથમિક ક્રિયાઓનો પ્રારંભ કરે છે.

ચિત્ર૭૩ ચક્રવર્તીનાં ચૌદ રત્નો.

રત્નનાં નામ	રત્નનું પ્રમાણ	રત્નની જાતિ	ઉપયોગ વિષય
૧ ચક્ર રત્ન	વામ (ચાર હાથ પ્રમાણ)	એકેન્દ્રિય	શત્રુઓનો પરાજય કરવામાં અનન્ય સાધન.
૨ છત્ર રત્ન	,,	,,	ચક્રવર્તીના હસ્તસ્પર્શ માત્રથી બાર યોજન વિસ્તાર થઇ શકે, જેની નીચે ચક્રવર્તીનું સૈન્ય રહી શકે.
૩ દંડ રત્ન	,,	,,	જેનાથી ઊંચીનીચી જમીન સરખી થઇ શકે અને કારણ પડયે એક હજાર યોજન જમીનમાં જેનાથી ખાડો થઈ શકે.
૪ ચર્મ રત્ન	બે હસ્ત પ્રમાણ	,,	ચક્રવર્તીના સ્પર્શ માત્રથી બાર યોજન જેનો વિસ્તાર થઈ શકે; ઉપર ચક્રવર્તીના સૈન્યનો સમાવેશ થઇ શકે.
૫ ખડ્ગ રત્ન	૩૨ અંગુલ	,,	રણસંગ્રામમાં શત્રુસમૂહનો ઘાત કરવામાં અપ્રતિહત શક્તિવાળું.
૬ કાકિણી રત્ન	૪ અંગુલ	,,	વૈતાઢયની ગુફામાં૪૯પ્રકાશમંડલોકરવામાં ઉપયોગી.
૭ મણિ રત્ન	૪ અંગુલ લંબાઇ ૨ ,, પહોળાઈ	,,	બાર યોજન સુધી પ્રકાશ કરનાર, માથે અથવા હાથ વગેરે અવયવોપર બાંધે છતે સર્વ રોગનો નાશ કરનાર.
૮ પુરોહિત રત્ન	તે તે કાળને ઉચિત	પંચેન્દ્રિય	શાન્તિક કર્મ કરનાર.
૯ ગજ રત્ન	,,	,,	મહાવેગવાન, પ્રૌઢ પરાક્રમી.
૧૦ અશ્વ રત્ન	,,	,,	,,
૧૧ સેનાપતિ રત્ન	,,	,,	ગંગા–સિંધુને પેલે પાર વિજય કરનાર.
૧૨ ગૃહપતિ રત્ન	તે તે કાળને ઉચિત	પંચેન્દ્રિય	ઘરનું સર્વ પ્રકારનું કામકાજ કરનાર (ભંડારી).
૧૩ વાર્ધિક(સૂત્રધાર)રત્ન	,,	,,	સુતારનું કાર્ય કરનાર.
૧૪ સ્ત્રી રત્ન	,,	,,	અતિ અદ્ભુત વિષયભોગનું સાધન.

ચિત્રમાં રત્ન ૮માં પુરોહિતના ડાબા હાથમાં શાંતિપાઠનું પાનું આપેલું છે અને જમણા હાથની આંગળી ઊંચી કરીને તે કાંઇક બોલતો જણાય છે. રત્ન ૧૧ માં સેનાપતિના જમણા હાથમાં ભાલો તથા ડાબા હાથમાં ઢાલ છે. રત્ન ૧૨ માં ડાબા હાથમાં તાજવાં પકડીને ગૃહપતિ–ભંડારીને ચીતરેલો છે અને રત્ન ૧૩ માં સુતારનો પ્રસંગ દર્શાવવા જમણા હાથમાં રાખેલા કુહાડાથી ડાબા હાથમાંનું લાકડું છોલતો ચીતરેલો છે.

ચિત્ર ૬૪ નગરશેઠ શાંતિદાસ તથા તેમની સ્ત્રી કપુરબાઈ–આ પાનું મને વડોદરાના શુક્રવારબજારમાંથી મૂળ મળેલું. ગુજરાતના ઇતિહાસમાં શાંતિદાસ નગરશેઠ અગ્રસ્થાન ભોગવે છે. તેમના વંશજો આજે પણ અમદાવાદના નગરશેઠ તરીકે ઓળખાય છે.

શાંતિદાસ નગરશેઠનું એક ચિત્ર ઝવેરીવાડામાં આવેલા સાગરગચ્છના ઉપાશ્રયના થાંભલા ઉપર ચીતરેલું છે, જેના ઉપરથી ફોટો લઇને ગુજરાત સાહિત્ય સભાએ 'ગુજરાતનું પાટનગર અમદાવાદ' નામના પુસ્તકમાં પૃષ્ઠ ૬૦૧ની સામે ૫૬ નંબરના ચિત્ર તરીકે તે છપાવેલું છે. એમાં તેઓ પોતાના ગુરુ શ્રી રાજસાગર (સૂરિ)ના ઉપદેશનું શ્રવણ કરતા અંજલિ જોડીને નીચેના ભાગમાં

ચિત્ર ૬૪ : નગરશેઠ શાંતિદાસ તથા તેમની સ્ત્રી કપુરબાઈ

બેઠેલા છે, જ્યારે આ પતરામાં શ્રીરાજસાગરસૂરિના ગુરુભાઈ શ્રીકિરતિસાગર ઉપાધ્યાયના સામે અંજલિ જોડીને તેઓ ઊભેલા છે. પતરાના બીજા ભાગમાં તેઓની બીજી સ્ત્રી કપુરબાઈ કે જેની કુક્ષિથી વિ. સં. ૧૬૮૬ માં રત્નજી નામના પુત્રનો જન્મ થયો હતો[૧૯] તે હાથમાં જપમાળા અને બગલમાં ઓઘો લઈને બેઠેલાં સકલવીરધન(ની) સાધ્વીની સામે બે હાથ જોડીને ઊભેલાં છે. બંને ભાગની છતોમાં ચંદરવો બાંધેલો છે અને ૐ અક્ષર લખેલો છે. નીચેના ભાગમાં પાદુકાઓ કોતરેલી છે. સાગરગચ્છના ઉપાશ્રયના ચિત્ર કરતાં આ પતરાની આકૃતિઓ બહુ જ સારી રીતે સચવાએલી છે.

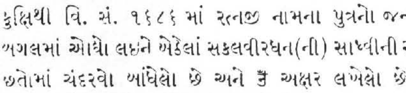

ચિત્ર ૬૫ : કાગળની પ્રત ઉપરનું એક શોભન ચિત્ર

ચિત્ર ૬૫ કાગળની પ્રત ઉપરનું એક શોભનચિત્ર. અમદાવાદના ડહેલાના ઉપાશ્રયની 'નમિઊણવૃત્તિ'ની એક પ્રતના છેલ્લા પાના ઉપરથી.

ચિત્ર ૬૬ કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રસૂરિઃ પ્રવર્ત્તકજી શ્રીકાંતિવિજયજીના સંગ્રહમાંથી—વાડીપાર્શ્વનાથના જિનમંદિરની બાંધણી સ્થાપત્યના નિયમોના અનુસારે જેઓની દેખરેખ નીચે કરવામાં આવી હતી અને જેઓ શિલ્પશાસ્ત્રના અખંડ અભ્યાસી હતા તથા

૧૯ જુઓ : 'ગુજરાતનું પાટનગર અમદાવાદ', પૃષ્ઠ ૭૩૭ની ફૂટનોટ.

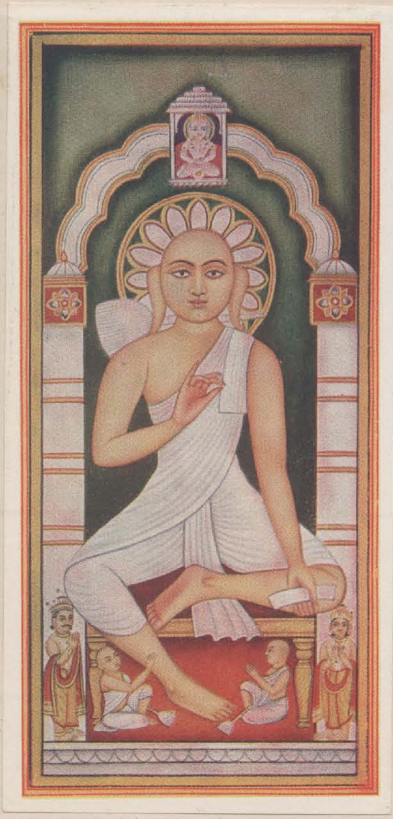

ચિત્ર ૬૬ : કલિકાલસર્વજ્ઞ હેમચંદ્રસૂરી (વીસમો સૈકો)

વિ.સં. ૧૯૭૦ (ઇ સ. ૧૯૧૩)માં જેઓ કાળધર્મ પામેલા તે શિલ્પશાસ્ત્રપારંગત પાટણનિવાસી યતિવર્ય શ્રીહિંમતવિજયજીએ આ ચિત્ર સ્વહસ્તે જ તૈયાર કરીને પ્રવર્તકજી શ્રીકાંતિવિજયજીને ભેટ આપેલું છે.

ચિત્રની વચમાં પ્રવચનમુદ્રાએ કલિકાલસર્વજ્ઞ શ્રીહેમચંદ્રસૂરીશ્વરજી વિરાજમાન છે. તેઓનો શાંત, મૃદુ હાસ્ય કરતો દેદીપ્યમાન ચહેરો ભલભલાને માન ઉપજાવ્યા વિના ન રહે. તેમના મસ્તકની પાછળના ભાગમાં ભામંડલ છે અને ગરદનની પાછળના ભાગમાં ઓઘો છે. નીચે જમણી બાજુએ પરમાર્હત્ કુમારપાળ તથા ડાબી બાજુએ ઉદયનમંત્રિ બંને હસ્તની અંજલિ જોડી ઊભેલા છે. તેઓના પગ આગળ જમણી તરફ પગ દબાવતા તેઓના મુખ્ય શિષ્ય શ્રીરામચંદ્રસૂરિ અને ડાબી તરફ બીજા શિષ્ય શ્રીબાલચંદ્ર હોય એમ લાગે છે. આજે માંહોમાંહેના કુસંપમાં જૈન યતિઓમાંથી આ કળાનો લગભગ લોપ થઈ ગયો છે.

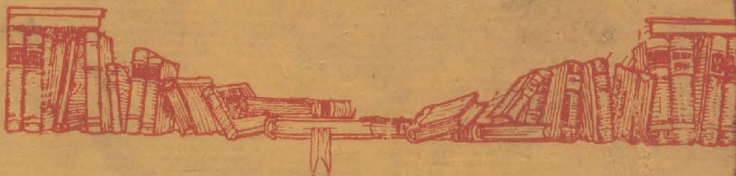

અમારાં પ્રકાશનો

જૈન ચિત્રકલ્પદ્રુમ	ચિત્રસંખ્યા	૩૨૦	૨૫-૦-
મહાપ્રાભાવિક નવસ્મરણ	,,	૪૧૨	૨૫-૦-૦
ભૈરવ પદ્માવતી કલ્પ	,,	૭૦	૧૫-૦-૦
મંત્રાધિરાજ ચિંતામણિ	,,	૬૫	૭-૮-૦
જૈન સ્તોત્ર સંદોહ ભાગ-૧	,,	૧૦	૫-૦-૦
શ્રી ઘંટાકર્ણ માણિભદ્ર મંત્ર-તંત્ર-કલ્પાદિ સંગ્રહ	,,	૨૪	૫-૦-૦
અનેકાર્થ સાહિત્યસંગ્રહ ભાગ-૧			૨-૦-૦
૧૧૫૧ સ્તવન મંજુષા	,,	૨૫	૨-૮-૦
શ્રી જૈન સજ્ઝાયસંગ્રહ	,	૨૦	૨-૮-૦
ભારતીય જૈન શ્રમણસંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	,,	૨૦	૮-૦-૦
શ્રી જિનદર્શન ચોવીશી	,,	૩૩	૦-૪-૦
જૈન ચિત્રકલ્પલતા	,,	૬૫	૮-૦-૦

તૈયાર થતા ગ્રંથો

ચિત્રકલ્પસૂત્ર (બારસા સૂત્ર) દરેક પાને પાને રંગીન ડીઝાઇનો	૧૬-૦-૦
ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેમનું શિલ્પસ્થાપત્ય ભાગ-૧	૧૫-૦-૦
શ્રી કાલકાચાર્ય (નવલકથા)	૨-૮-૦
મહર્ષિ મેતારજ(,,)	૨-૦-૦
શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ)	

પ્રાપ્તિસ્થાન:

સારાભાઈ મણિલાલ નવાબ · નાગજીભૂદરની પોળ · **અમદાવાદ**